
चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र



चौथे दिन प्रातःकाल फिर दोनों तरफ की सेनायें युद्ध के लिए रणभूमि में आई। उस दिन युधिष्ठिर ने पाण्डव सेना को एक नये व्यूह में व्यवस्थित किया।

इस व्यूह में अर्जुन, कपि ध्वजावाले रथ पर सवार होकर सेना के अग्र भाग में खड़े होकर, भीष्म और द्रोण भादि की प्रतीक्षा कर रहा था।

युद्ध के प्रारम्भ होते ही भीष्म, द्रोण, कृपा, शल्य, दुर्योधन, सोमदत्त आदि योद्धाओं ने मिलकर अर्जुन का मुकाबला किया।

अर्जुन की मदद के लिए अभिमन्यु आया और वह सब से युद्ध करने लगा। भीष्म ने अभिमन्यु से बचकर अर्जुन पर आक्रमण करना आरम्भ किया। दोनों में भयङ्कर युद्ध हुआ। इस बीच, अश्वत्थामा, भूरिश्रव, शल्य, चित्रसेन, साम्यमनि का लड़का, ये पाँचों कौरव योद्धा अभिमन्यु पर हमला करने लगे।

अभिमन्यु को साहसपूर्वक सबसे युद्ध करता देख अर्जुन ने सोत्साह शंख बजाया। पाँच योद्धा मिलकर एक अभिमन्यु का मुकाबला न कर सके।

तब दुर्योधन ने त्रिगर्त, मद्र, कैकय आदि, पच्चीस हजार की संख्या में सेना भेजी। उन्होंने आकर अर्जुन और अभिमन्यु को घेर लिया। यह देख पाण्डवसेना के सर्वोच्च सेनापति, धृष्टद्युम्न को गुस्सा आया। वह बहुत-सी सेना लेकर शत्रुओं का सामना करने आया।

कृपा, कृतवर्मा आदि कौरव योद्धा धृष्टद्युम्न के बाणों के शिकार हुये। इस प्रकार धृष्टद्युम्न को, कौरवसेना को नष्ट करता देख साम्य के लड़के को गुस्सा आ

गया। वह धृष्टद्युम्न और उसके सारथी पर बाण छोड़ता आगे बढ़ा।

धृष्टद्युम्न ने एक बाण से उसका धनुष तोड़ दिया। फिर क्षण में उसके रथ के घोड़ों और उसके सारथी को मार दिया। साम्यमनि का लड़का तलवार लेकर धृष्टद्युम्न पर लपका। धृष्टद्युम्न ने उसको पास आने दिया। पास आते ही उस पर उसने जोर से गदा का प्रहार किया। वह वहीं ठण्डा हो गया।



यह देख साम्यमनि, और शल्य ने धृष्टद्युम्न से घोर युद्ध किया। काफी देर तक दोनों पक्ष समान रहे। फिर ऐसा लगा, जैसे शल्य की ही विजय होगी। पर इतने में अभिमन्यु आया, वह शल्य का सामना करके उस पर तेज बाण छोड़ने लगा।

शल्य की रक्षा करने के लिए दुर्योधन, दुश्शासन, विविंशति, विकर्ण, दुर्मर्षण, दुस्सह, दुर्मुख, चित्रसेन, सत्यव्रत, पुरुमित्र आदि ने आकर अभिमन्यु को घेर लिया।

पाण्डवों की तरफ से अभिमन्यु की रक्षा के लिए भीम, धृष्टद्युम्न, उपपाण्डव, नकुल, सहदेव आये। दोनों पक्षों के दस-दस योद्धाओं में एक समय में घमासान युद्ध हुआ। इतना युद्ध देखने के लिए और युद्ध छोड़कर वहाँ जमा हो गये। शल्य, यद्यपि नकुल सहदेव का मामा होता था, तो भी उनमें भयङ्कर युद्ध हुआ।

युद्ध के बीच में भीम यकायक सिंह की तरह गर्जन करता गदा लेकर रथ से उतर कर शल्य की ओर बढ़ा। रास्ते में जो हाथी या पदाति वगैरह आये, उनको उसने गदा से मार दिया। उसका रौद्र-रूप देखकर सब चकित थे। भीम जब यों आगे आगे जा रहा था, तो धृष्टद्युन्न और

अभिमन्यु आदि ने पीछे से बाणों से उसकी रक्षा की।

भीम के प्रहार से भयभीत हाथी, पदातियों को कुचलते भाग निकले। इसके बाद भीम ने शत्रुसेना में प्रलय-सी मचा दी। लोग धड़ाधड़ मरने लगे।

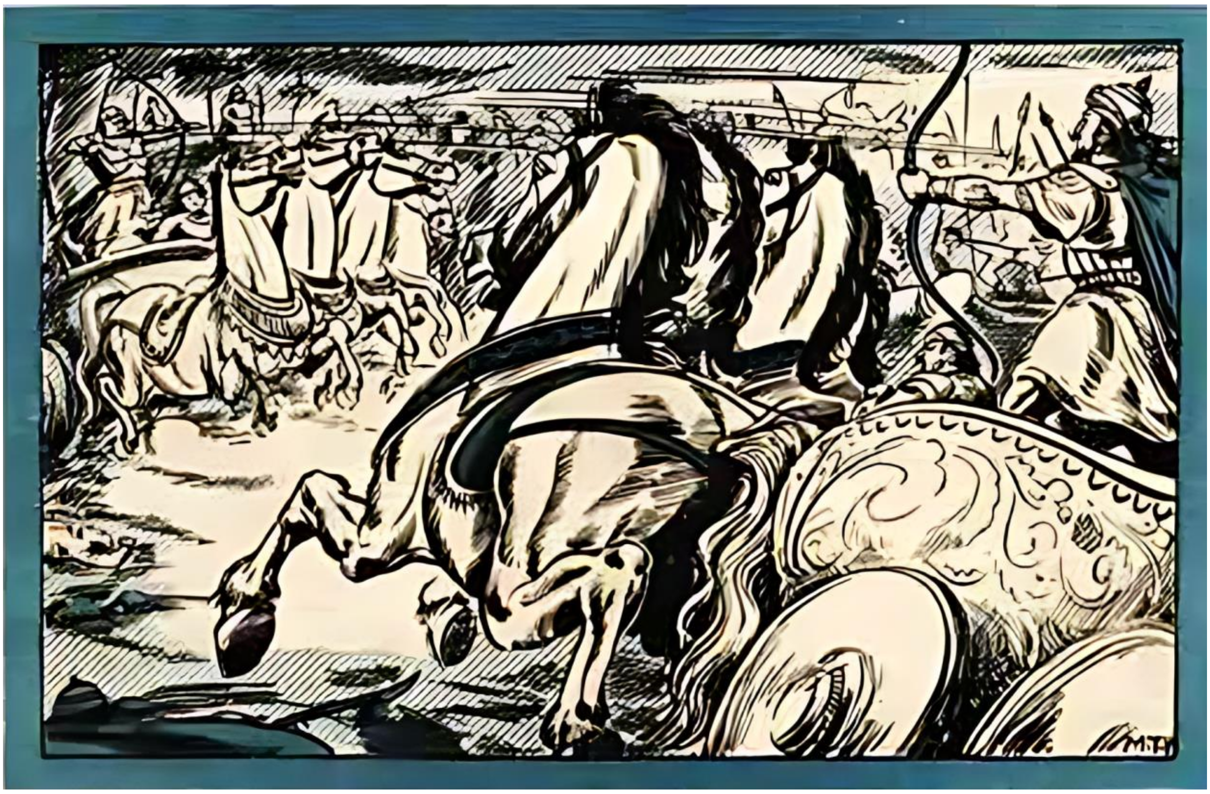
आखिर कौरवों की ऐसी दुस्थिति हो गई कि भीम जिस तरफ देखता उस तरफ के कौरव सैनिक मैदान छोड़कर भागने लगते।

इतने में, भीष्म ने अपने रथ पर भीम की ओर आते हुये उस पर बाण वर्षा की। तब सात्यकी, भीष्म के सामने आया।

सात्यकी के प्रलयङ्कर प्रहारों के सामने कौरव सेना न टिक सकी। आखिर अलम्बस नाम का राक्षस उसका मुकाबला करने आया और उसे भी अन्त में पीछे हटना पड़ा।

जब ऐसा लगता था कि सात्यकी का सामना करनेवाला कोई योद्धा ही न था, तब भूरिश्रव ने सात्यकी पर आक्रमण किया, दुर्योधन और उसके भाई, भूरिश्रव की सहायता के लिए आये।

इतने सारे धृतराष्ट्र के पुत्रों को देखकर भीम उस शेर की तरह हो गया, जिसे



हरिणों का झुण्ड दीख गया हो। वह उन पर गदा से वार करने लगा।

दुर्योधन और उसके नन्दक नाम के भाई ने भीम को बाणों से घायल कर दिया। भीम ने सोचा कि ऐसे काम न चलेगा, उसने अपने रथ पर चढ़कर सारथी विशोक से कहा- "देखते रहो, आज धृतराष्ट्र के इन लड़कों को कैसे मारता हूँ। उनकी खबर लूँगा।"

भीम ने दुर्योधन और नन्दक पर बाण छोड़ा। दुर्योधन का एक बाण, भीम के हाथ पर लगा और उसके हाथ का बाण नीचे गिर गया। भीम के सारथी को भी बाण लगे। भीम ने गुस्से में दुर्योधन के धनुष को बाण से तोड़ दिया। जब दुर्योधन ने एक और धनुष लेकर भीम की छाती पर तेज बाण छोड़ा, तो भीम अपने रथ में मूर्च्छित हो गिर गया।

यह देख अभिमन्यु आदि पाण्डव वीरो ने दुर्योधन के रथ पर बाणों की बौछार कर दी। पर इतने में भीम को होश आ गया और वह कौरव योद्धाओं से बाण युद्ध करने लगा। शल्य उसके प्रहार



को न सह सका और वह भयभीत हो युद्ध छोड़कर चला गया।

सुषेण, जलसिन्धु, सुलोचना, उग्र, भीमरथ, बीरबाहु, आलोलुप, दुर्मुख, दुष्प्रधर्ष, विवित्स, विकट, सम, आदि सब धृतराष्ट्र के पुत्र ही थे। और ये सब मिलकर भीम पर हमला करने लगे।

जब भीम ने उनको एक एक करके अपने बाणों से मारना शुरु किया, तो बाकी उसके बाणों से बच कर भाग निकले।

भीष्म ने कौरव योद्धाओं से कहा- "अरे, योद्धाओ, भीम, धृतराष्ट्र के पुत्रों को मार रहा है, तुम सब उस पर हमला करो। आगे बढ़ो।"

यह सुन, बहुत से वीर भीम से लड़ने आये। उनमें से भगदत्त एक बड़े हाथी पर चढ़कर भीम पर बाण बरसाने लगा, इसके उत्तर में अभिमन्यु आदि ने भगदत्त पर बाण छोड़े और उसके हाथी को घायल कर दिया। उस मदोन्मत हाथी को गुस्सा आ गया और उसने सेना में तहलका मचा दिया।

भगदत्त का जब एक बाण भीम की छाती पर लगा और भीम ध्वजस्तम्भ के



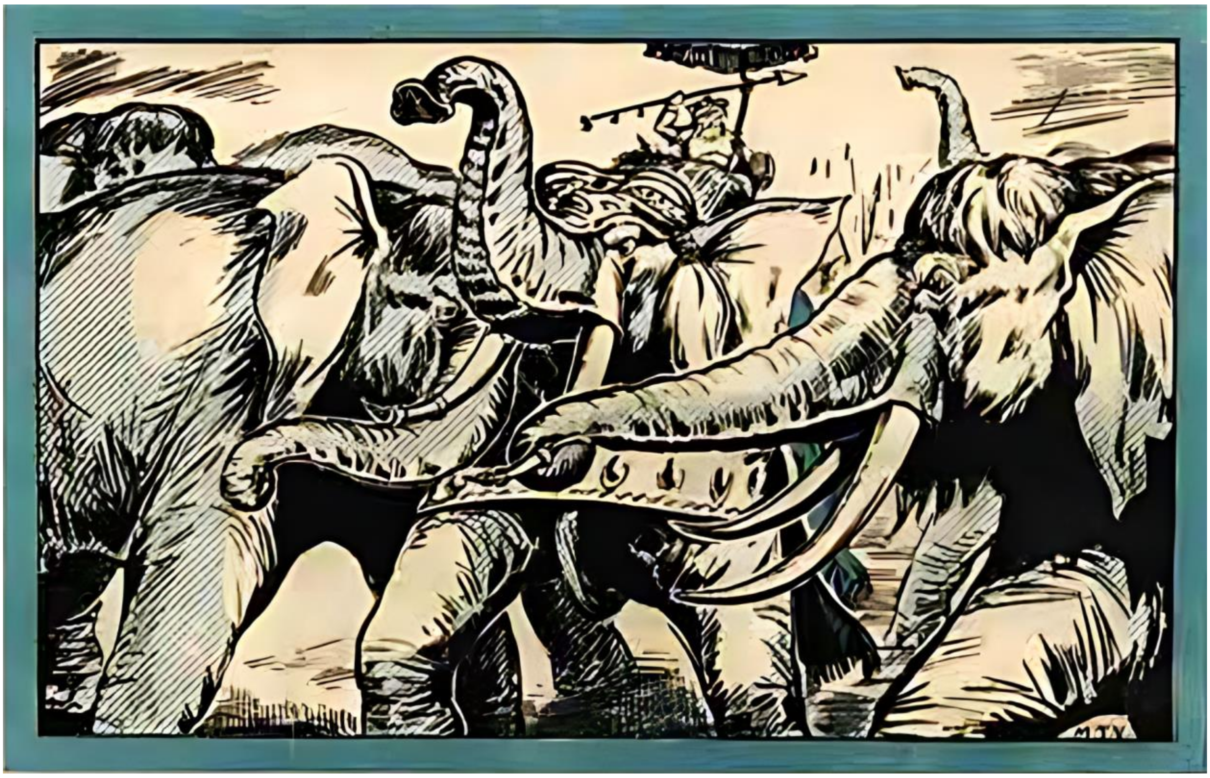
सहारे गिर गया। यह देख विजयोन्माद में उनका भगदत्त ने सिंह की तरह गर्जन किया।

यह जानकर घटोत्कच आगबबूला हो गया। उसने कौरवों का घमण्ड तोड़ने के लिए माया युद्ध करने का निश्चय किया। वह यकायक एक मायावी ऐरावत पर सवार होकर भयङ्कर आकार में शत्रु सेना में प्रत्यक्ष हुआ।

उसके पीछे बाकी दिक-पालक आये। उन में तीन पर सशस्त्र राक्षस थे।

घटोत्कच के हाथी, भगदत्त के हाथी को घेरकर उसे सताने लगे। वह उनका मुकाबला न कर सका और हाहाकार करने लगा।

भगदत्त, कौरव सेना के नेताओं में से था। महारथ था। उस जैसा योद्धा घटोत्कच द्वारा कहीं मारा न जाय; यह सोचकर भीष्म ने द्रोण आदि कौरव बीरों को उसकी रक्षा के लिए भेजा। उनको आता देख युधिष्टिर आदि पाण्डव और पाञ्चाल नरेश उनका मुकाबला करने आये। घटोत्कच के विजय गर्जन से आकाश गूँज रहा था। भीष्म ने द्रोण से कहा-"आचार्य। इस राक्षस से युद्ध करना मुझे



नहीं आता। हम थक थका गये हैं और इस समय इस राक्षस का मुकाबला नहीं कर सकते। आज के लिए युद्ध काफ़ी है। चलो चलें।"

यह बात कौरव योद्धाओं को जँची। घटोत्कच की पकड़ से वे जैसे तैसे बाहर आये और अपने अपने शिविर में चले गये। उनको जाता देख पाण्डवों ने शंखनाद किया।

फिर भीम और घटोत्कच के पीछे विजयोल्लास में वे अपने शिविर पहुँचे। दुर्योधन, अपने शिविर में बैठकर भाइयों के निधन पर रोया धोया। फिर भीष्म के पास जाकर उसने कहा-"दादा, तुम, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा, कृतवर्मा, आदि महारथ हैं। आप मिलकर तीनों लोकों को जीत सकते हैं। फिर ये पाण्डव आप लोगों का मुकाबला करके कैसे जीत रहे हैं? अगर इसका कोई विशेष कारण हो तो बताओ। क्यों वे बात बात पर मैदान मार ले जाते हैं?"

"इन प्रश्नों का उत्तर तुम जानते हो? मैंने कितनी ही बार कहा कि पाण्डवों से युद्ध न करो, सन्धि कर लो। उन्होंने कभी किसी का बुरा नहीं किया। यही नहीं, उनकी ओर कृष्ण है। जब तक वह उनके साथ है, उनको कोई नहीं मार सकता। जाननेवालों का कहना है कि कृष्ण और अर्जुन, नर, नारायण के आवतार हैं।" भीष्म ने कहा।

दुर्योधन भीष्म को नमस्कार करके उन से विदा लेकर अपने डेरे में जाकर लेट गया।





नर्मदा के तट पर धवल राज्य था। उसका राजा था तारकेश्वर। उसके दो लड़के थे। बड़े का नाम शूरसेन था। उसकी उम्र पच्चीस की थी। छोटे का नाम चित्रसेन था और उसकी उम्र अट्ठारह थी।

ये दोनों राजकुमार एक दिन सवेरे अपने मित्रों को साथ लेकर शिकार के लिए जङ्गल में निकले। जङ्गल में कुछ दूर जाने के बाद उनको हरिणों का एक झुण्ड दिखाई दिया। राजकुमारों ने अपने घोड़ों को ऐंड मारी। उनपर बाण छोड़ते ये अपने साथियों से दूर जङ्गल में चले गये।

उन्हें यकायक एक पेड़ के पीछे से सिंह का गर्जन सुनाई दिया। इससे पहले कि राजकुमार ध्वनि की दिशा की ओर सिर मोड़कर बाण छोड़ते, दो शेर गरजते हुये उनकी ओर कूदे। शेरों को देखते ही राजकुमारों के घोड़े डर गये और पीछे भागने लगे।

वह घोड़ा, जिस पर राजकुमार चित्रसेन सवार था, उसके बहुत लगाम खींचने पर भी पेड़ों के बीच में से बाण की तरह भाग निकला। भागता भागता वह एक पहाड़ी इलाके में पहुँचा और वहाँ नीचे गिरकर उसने प्राण छोड़ दिये।

तब तक चित्रसेन बहुत थक चुका था। उसने अपने भाई के लिए चारों ओर देखा। वह कहीं न दिखाई दिया। उसे लगा कि



वह अपने साथियों से बहुत दूर चला आया था। उस जगह बड़े बड़े पेड़ थे। वे आकाश को छूते से लगते थे। उनके कारण अन्धेरा भी था। पेड़ों की शाखाओं से उसे बड़े बड़े बन्दर, तरह तरह के पक्षी, बड़े बड़े भयङ्कर साँप लटकते हुये दिखाई दिये।

आस-पास की जगह देखकर चित्रसेन को बहुत डर लगा। उसे लगा कि न केवल अपने साथियों से ही दूर हो गया था, परन्तु मानव सामाज और उसके निवास से ही दूर हो गया था। धवलगिरि पहुँचने के लिए सिवाय पैदल जाने के कोई रास्ता न था। उसे उस समय यह भी न पता था कि वह नगर किस दिशा में था।

चित्रसेन अपनी विचित्र परिस्थिति का अध्ययन करते हुये जब जङ्गल में थोड़ी दूर चला, तो उसे सामने एक पहाड़ी दिखाई दी, जिसपर झाडियों और छोटे छोटे पेड़ थे। उस पहाड़ की तलहटी में एक छोटा-सा नाला वह रहा था। नाले में पानी देखते ही चित्रसेन को अनुभव हुआ कि उसका मुख सूखा जा रहा था। उसने नाले में उतर कर अपनी प्यास बुझाई।

प्यास बुझाने के बाद चित्रसेन की जान में जान आई। वह नाले के किनारे बैठकर सोचने लगा कि आगे क्या करना था। शायद भाई शूरसेन भी मेरी तरह शेरों की पहुँच से बाहर भाग गया होगा। उसने यह भी अनुमान किया कि मेरे घोड़े की तरह भाई का घोड़ा भी डर डराकर इसी इलाके में भागकर आया होगा।

वह तुरन्त उठ खड़ा हुआ और जोर से चिल्लाया-"भाई, शूरसेन...."

जब चित्रसेन की आवाज पेड़ों में, पहाड़ की गुफाओं में गूँजी तो नाले के के परली तरफ की गुफा में से आवाज आई-"कौन? क्या यहाँ किसी आदमी की आवाज हुई है? कितने सौभाग्यशाली हो तुम? एक बार तुम जरा मेरे पास तो आओ।" चित्रसेन ने यह सुना।

गुफा में से आती हुई उस आवाज को सुनते ही चित्रसेन चौका, फिर धीरज बाँधकर उसने जोर से पूछा- "कौन हो तुम? राक्षस हो या नरमाँस भक्षक जङ्गली हो? गुफा से बाहर आओ, मैं तुम्हें अपनी तलवार पर बलि चढ़ा दूँगा।"

चित्रसेन ने अभी कहना खतम न किया था कि गुफा में से विचित्र अट्टहास आया। फिर सुनाई पड़ा- "अरे तुम कितने साहसी हो! मैं तुम जैसे बहादुर की ही प्रतीक्षा कर रहा हूँ। मैं न नरमांस भक्षक हूँ। न राक्षस ही हूँ। मैं एक सिद्ध पुरुष हूँ। मैं एक ऐसी चीज़ तुम्हें देने जा रहा हूँ, जिसे मैंने बहुत सालों की तपस्या के बाद पाया है।

चित्रसेन ने क्षण भर में निर्णय कर लिया। अगर उस गुफा में राक्षस ही



है, तो जीते जी वहाँ से भाग निकलना उस के लिए सम्भव न था। इसलिये राक्षस से लड़ते लड़ते प्राण छोड़ देना क्षत्रिय का कर्तव्य था। अगर सचमुच गुफा में कोई सिद्ध पुरुष ही हो, तो मुझे कोई हानि होगी ही नहीं। यह निश्चय करते ही चित्रसेन तलवार निकालकर नाले के घुटने भर पानी को पार करके परली तरफ गया। वहाँ पहाड़ में बहुत-सी गुफायें थीं।

इसलिये चित्रसेन न जान सका कि उसको पुकारनेवाला व्यक्ति किस गुफा में था। एक एक गुफा के पास जाकर उसने



झाँककर अन्दर देखा। इतने में उसको एक गुफा के अन्दर से सुनाई दिया-"बेटा, घबराओ मत, अन्दर आओ।" चित्रसेन ने तलवार और जोर से पकड़ ली और उसने उस गुफा में झाँक कर देखा, जिसके अन्दर से आवाज आई थी। गुफा में उसको एक सिद्ध पुरुष दिखाई दिया। उसके सिर के बाल और दाढ़ी सफ़ेद थी। वह गुफा में एक ऊँची वेदी पर बैठा था क्योंकि गुफा के छत में से सूर्य की किरणें आ रही थीं, इसलिये अन्दर प्रकाश था।

वृद्ध सिद्ध पुरुष को देखते ही चित्रसेन पछताया कि उसने क्यों कड़वी बातें कही थीं। उसने तलवार म्यान में रख ली सिद्ध के पास जाकर नमस्कार करके उसने कहा-"महात्मा, मुझे माफ़ कीजिये।"

चित्रसेन की बात सुनकर सिद्ध मुस्कराया। उसने कहा-"बेटा, तुम उत्तम क्षत्रिय मालूम होते हो। साठ वर्ष की कठिन तपस्या के बाद मैंने एक अपूर्व वस्तु पाई है। परन्तु मैं उसका अनुभव नहीं कर सकता। मैं उसको पाने के प्रयत्न में ही बूढ़ा हो गया। आज रात को, चन्द्रमा के अस्त होने के समय, मेरी मौत हो जायेगी। मैं बहुत दिनों से इस प्रतीक्षा में था कि मैं इस अपूर्व वस्तु को किसी योग्य व्यक्ति को देता जाऊँ, मेरे अन्तिम दिनों में तेरा भाग्य तुम्हें मेरे पास लाया है। यह लो वह अपूर्व वस्तु।" कहकर उसने पास रखी बाँस की टोकरी चित्रसेन को दे दी।

चित्रसेन ने सिद्ध से टोकरी ले ली। वह उसे खोलनेवाला ही था कि सिद्ध ने अपने डण्डे से टोकरी का ढक्कन दबा दिया।

"बेटा! जल्दबाजी में टोकरी यहाँ न खोलना। तुम जिस प्रान्त में रहने की अधिक इच्छा रखते हो, उस प्रान्त में ही इसका खोलना श्रेयस्कर है।

चित्रसेन ने बूढ़े की बात सुनकर स्वीकृति में सिर हिलाया। "महात्मा! आपकी कृपा के लिए मैं कृतज्ञ हूँ। आप मुझसे जो सेवा-शुश्रुषा चाहेंगे, मैं यह करने के लिए तैयार हूँ।" उसने विनयपूर्वक कहा।

यह सुनकर सिद्ध पुरुष हँसा। "बेटा! तुम्हारा विनय और भक्ति देखकर मुझे बहुत आनन्द हो रहा है। बस, थोड़ी देर में मैं मरने जा रहा हूँ। ऐसी हालत में तुम मेरे लिए कुछ भी नहीं कर सकते। परन्तु मैं तुम्हें एक छोटा-सा काम बताता हूँ। गुफा से बाहर चले जाने के बाद तुम गुफा के पूर्व की तरफ के त्रिकोण से पत्थर को जोर से नीचे खींचना। यही तुम मेरे लिए कर सकते हो।"

चित्रसेन ने सिद्ध को नमस्कार करके गुफा से बाहर आकर दोनों हाथों से जोर से पत्थर खींचा। तुरन्त



इतने जोर से आवाज हुई कि मानों पहाड़ ही फट रहा हो। गुफा के सामने के भाग को एक पत्थर ने ऊपर से गिरकर इस तरह ढक दिया, जैसे वहाँ कुछ हो ही न।

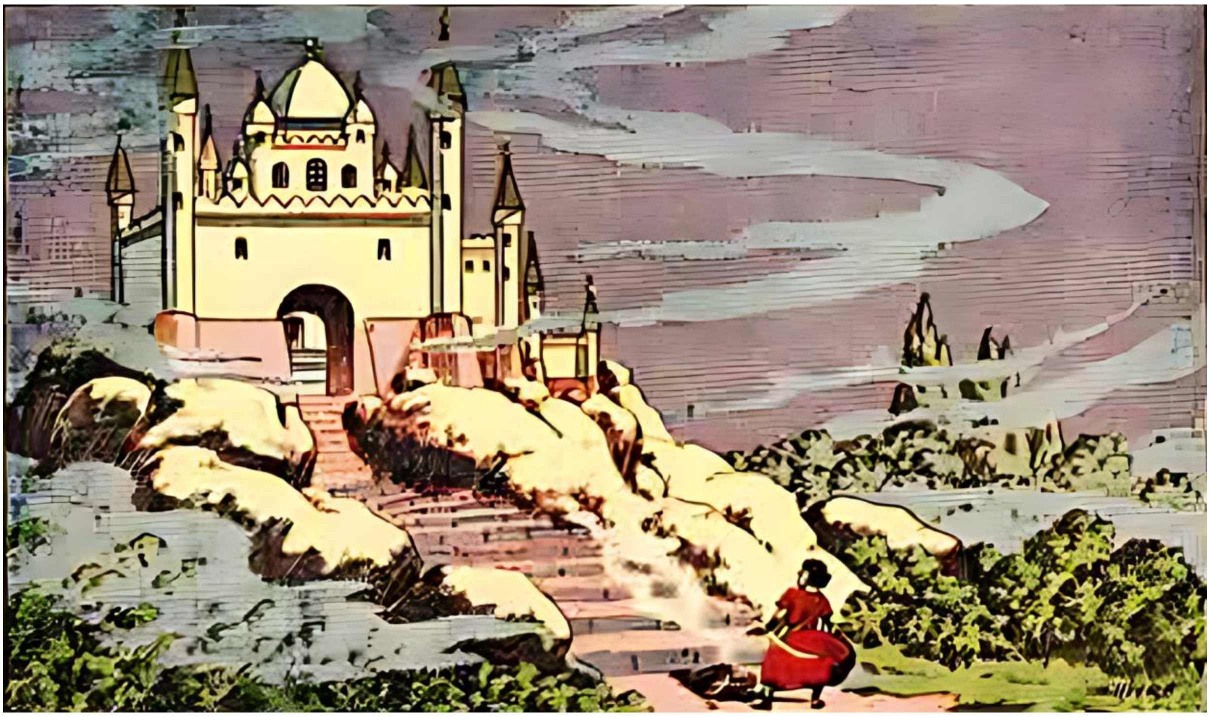
चित्रसेन थोड़ी देर वहाँ खड़ा रहा। फिर नाला पार करके जङ्गल में घुसा। वह नहीं जानता था अपने नगर पहुँचने के लिए वह किस तरफ जाये। इस कारण वह पेड़ों के बीच ऐसे रास्ते से जाने लगा, जो सब से अधिक आसान था। इस तरह कुछ दूर चलने के बाद उसे पश्चिम में सूरज ढलता हुआ दिखाई दिया। उसे भूख भी बुरी तरह सता रही थी।

हाँफता हाँफता चित्रसेन जङ्गल में कुछ दूर और चला, फिर एक ऐसी ऊँची जगह पहुँचा, जहाँ पेड़ न थे। वहाँ कुछ समय आराम करने के बाद उसको कन्धे पर लटकता हुआ टोकरा दिखाई दिया। उसने जानना चाहा कि उसमें ऐसी कौन-सी अपूर्व वस्तु थी। उसे तब सिद्ध पुरुष की बात याद नहीं रही।

उसने कन्धे पर से टोकरा नीचे उतारा। उसका ढक्कन उठाकर उसमें देखा। उसे ऐसा लगा, जैसे उसकी आँखों में बिजली चमक रही हो। आँखें बन्द करके खोलने पर उसने देखा कि सामने पेड़ों में एक गगनचुम्बी महल है।

यह आश्चर्यजनक दृश्य देखकर चित्रसेन मूर्तिवत् खड़ा रहा। फिर उसे सिद्ध पुरुष की बात याद आई। "मैं भी कितना मूर्ख हूँ। इस महा अरण्य में यह महल किस काम का? अगर यही धवलगिरि नगर में होता तो कितना अच्छा होता। बुद्धिहीनता के कारण मैंने सिद्ध के उपकार को मिट्टी में मिला दिया।" वह पछताने लगा।

इस हालत में चित्रसेन को जङ्गल के बीच में से हुङ्कार गर्जन सुनाई दिया।



देखते देखते पेड़ इस तरह झूमने लगे जैसे तूफान आ रहा हो। जब अचरज करते हुए चित्रसेन ने चारों ओर देखा; वह क्या देखता है कि एक राक्षस रास्ते के पेड़ों का उखाड़ता झूमता-झूमता उसकी ओर जल्दी-जल्दी आ रहा था। तुरन्त चित्रसेन म्यान में से तलवार निकालकर खड़ा हो गया।

राक्षस ने अट्टहास करके उसके पास आकर कहा-"क्या बे! तेरी इतनी हिम्मत हिमाकत! उग्राक्ष को देखकर, आदमियों का प्राण छोड़ना तो मालूम है, पर तेरी तरह तलवार निकालकर किसी को खड़े होते अभी तक नहीं देखा है।" पीछे मुड़कर अपूर्व महल को देखकर उसने पूछा-"क्या यह घरौन्दा तुम्ही ने बनाया है?"

"हाँ!" चित्रसेन ने बिना भय के कहा।

यह उत्तर सुनकर उमाक्ष ने अट्टहास किया। उसका अट्टहास इतने जोर का था कि पेड़ों से पते गिर सकते थे। "क्या इस जङ्गल को तेरे बाप दादाओं ने पानी देकर बड़ा किया है? खबरदार।



यह उग्राक्ष का जङ्गल है। क्योंकि तुमने मेरी आज्ञा के बिना यहाँ मकान बनाया हैं, इसलिए तुम्हें और इस मकान को तोड़ ताड़कर पहाड़ के उस पार फेंक दूँगा।" यह कहकर उसने चित्रसेन को पकड़ना चाहा।

चित्रसेन ने राक्षस के हाथ से बचकर कहा-"उग्राक्ष, जल्दी न करो। मेरे यहाँ मकान बनाने से तुम्हारा क्या नुक्सान हुआ है? चाहते हो तो वह मकान तुम्हारे लिए छोड़कर में चला जाऊँगा। काफी है।"

"ऐसा कुछ न होगा। मेरे जङ्गल में मेरी आज्ञा के बगैर तुमने घर बनाया है। अगर तुम जीवित रहना चाहते हो, तो जो माँगू वह देने के लिए मान जाओ।" उग्राक्ष ने कहा।

"क्या है?" चित्रसेन ने पूछा।

"तुम घर में आराम से रहो। मुझे कोई आपत्ति नहीं है। जो तेरे बच्चे हों, उनमें से बड़े लड़के को अट्ठारह साल पूरे होते ही मुझे सौंप देना।" उग्राक्ष ने कहा।

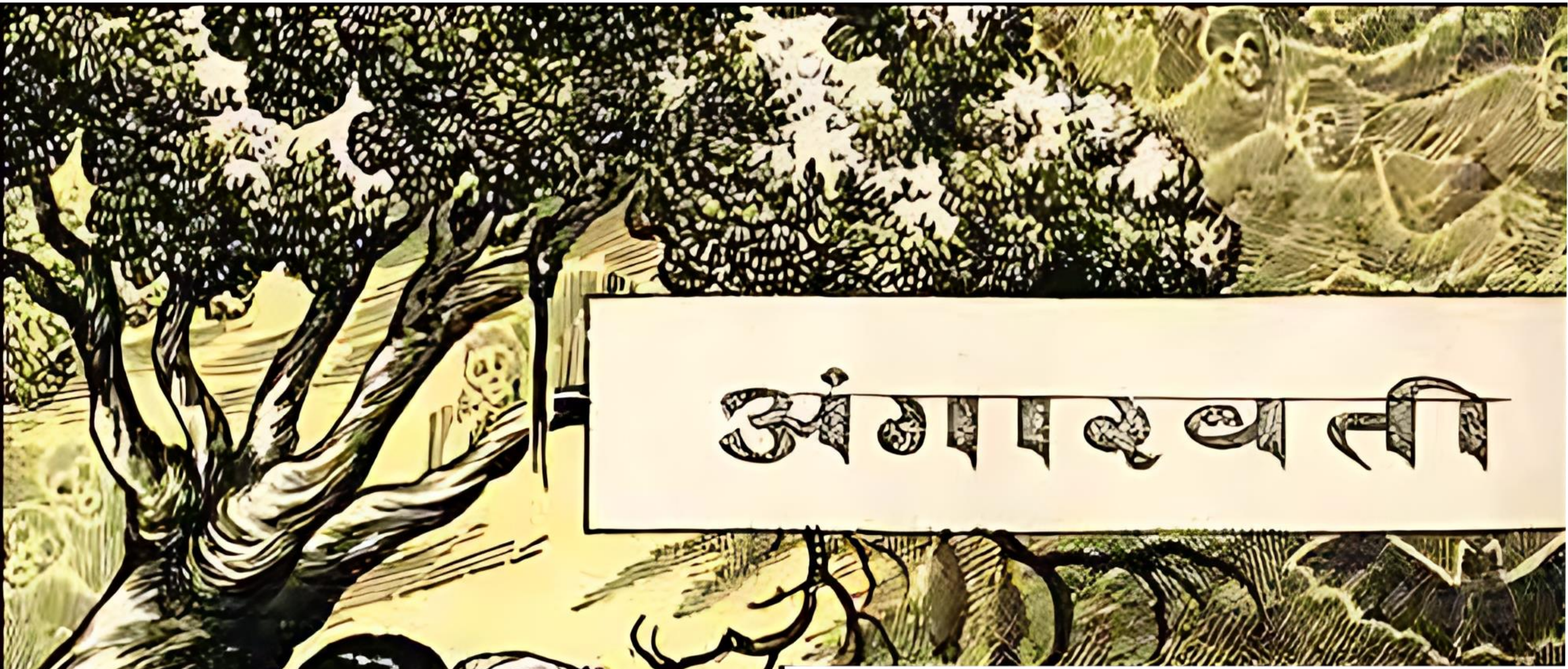
राक्षस की यह इच्छा चित्रसेन को बड़ी विचित्र-सी लगी। उसकी तो अभी तक शादी भी न हुई थी। उस हालत में राक्षस की इच्छा मान ली जाय तो क्या जाता है। कम से कम जीते जी मरने से तो बच ही सकेंगे।

चित्रसेन ने यह सोच कहा-"उग्राक्ष! मैं तुम्हारी बात मानने के लिए तैयार हूँ। जब मेरे लड़के की उम्र अट्ठारह की हो जाये, तो तुम निस्सङ्कोच उसे ले जाना।"

राक्षस यह सुनकर फूला न समाया। "अच्छा, तो तुम्हें जिन्दा छोड़ देता हूँ। अपना वचन पूरा करना।" वह यह कर जङ्गल में चला गया।

(अभी है)





अंगारवती



विकमार्क फिर एक बार पेड़ के पास गया। शव उतार कर, कन्धे पर डाल वह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा-"राजा, तुम्हारा धीरज आश्चर्यजनक है। तुम्हें इतने कष्ट सहता देख मुझे दया आ रही है। कहीं तुम्हें थकान न हो, में अङ्गारवती की कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यो कहानी सुनानी शुरु की।

उन दिनों उदयसेन वत्स राज्य का राजा था। उसकी राजधानी कौशाम्बी थी। उस समय लावणक नाम की जगह पर बुद्धदत्त नाम का एक क्षत्रिय रहा करता था। अङ्गारवती उसकी लड़की थी। जहाँ बुद्धदत रहा करता था, वह करीब करीब सुनसान जगह थी। इसलिए अङ्गारवती



घर-आङ्गन छोड़कर कहीं न जाया करती। हाँ, कभी कभी बन्धु बान्धव जरूर आ जाते थे। इसलिए अङ्गारवती का ऐसे वातावरण में पालन पोषण हुआ जहाँ उसके लौकिकज्ञान पाने की सम्भावना न थी। उसका पिता भी प्रायः घर छोड़कर बाहर न जाया करता था। वह अपने आङ्गन के पेड़ पौधों को देखता भालता समय काट रहा था। अङ्गारवती बड़ी हुई, सयानी हो गई। विवाह योग्य उसकी उम्र हो गई। वह यह भी न जानती थी कि उसको कैसा पति चाहिये था।

उस समय, वत्स का राजा शिकार खेलने अपने साथियों के साथ उस इलाके में आया। उसके साथियों में चण्डसेन नाम का एक व्यक्ति था। उसकी उम्र तीस वर्ष की होगी। उसका घराना काफी मशहूर था। परन्तु वत्स के राजा की नौकरी में उसे कुछ ही दिन हुए थे।

एक दिन चण्डसेन जङ्गल की पगडण्डी से पैदल जाता जाता बुद्धदत्त के घर के पास आया। उसकी नजर अङ्गारवती पर भी पड़ी। उसने उससे तुरन्त विवाह कर लेना चाहा। चण्डसेन ने बुद्धद्धत्त से परिचय किया। अपने कुल-गोत्र के बारे में उसे बताया। यह भी मालूम कर लिया कि अङ्गारवती का अभी विवाह नहीं हुआ था, फिर उसने अपने मन की बात बुद्धदत्त से कह दी।

यह सुन कि चण्डसेन उसकी लड़की से शादी करना चाहता था, बुद्धदत्त को आश्चर्य हुआ और आनन्द भी। सच तो यह था कि बर ढूँढ़ने की जिम्मेवारी से इस तरह बरी हुआ और दूसरा यह कि वह अगर सौ साल भी खोजता, तो चण्डसेन जैसा दामाद न पाता। खानदानी है।

अब तक अङ्गारवती जङ्गलों में ही रहती आई है। जब वह शादी करके कौशाम्बी नगर जायेगी तो कितना सुख पायेगी। बुद्धदत्त मन ही मन यह सोच बड़ा खुश हुआ। चण्डसेन को देखकर अङ्गारवती का मन बल्लियों तो नहीं उछला। पर उसके साथ शादी कर लेने की पिता की सलाह उसे जँची जरूर। उसका ख़याल था कि उस जैसा पति मिलना सचमुच सौभाग्य की बात थी।



सप्ताह के बाद चण्डसेन ने कौशाम्बी नगर वापस जाते हुए बुद्धदत्त के घर आकर कहा-"मैं घर वापस जा रहा हूँ। मैं विवाह के बारे में अपने बन्धु मित्रों को बताकर, मुहूर्त निश्चित करवाकर आपको खबर भेजूँगा। तब आप विवाह के लिए तैयारियाँ करना।"

चण्डसेन के चले जाने के बाद अङ्गारवती ने उसके बारे में सोचना छोड़ दिया। यद्यपि अङ्गारवती का विश्वास था कि उसको अच्छा वर मिल रहा था, पर सच कहा जाय तो अङ्गारवती ने प्रेम न किया था। उसने तब तक किसी से भी प्रेम न किया था।

कितने ही सप्ताह बीत गये, महीने बीत गये पर चण्डसेन के यहाँ से कोई खबर न आई। अङ्गारवती ने सोचा कि शायद उसने उससे शादी करने का इरादा बदल लिया था। यह सोचकर उसको कुछ भी निराशा नहीं हुई। उसके मन में यह बात भी रही कि उस जैसी का, जिसका जीवन जङ्गलों में कटा था, उस जैसे बड़े आदमी से विवाह होना शायद अच्छा भी न था।

परन्तु बुद्ध का चण्डसेन पर पूरा विश्वास था। "जानती हो, उसका

खानदान कितना बड़ा है? उस खानदान में लोग जान दे देंगे; पर वचन देकर मुकरेंगे नहीं।"

इस बीच कौशाम्बी में बहुत-सी बातें हुई। उदयसेन के मन्त्री यौगन्धराय ने मगधराजा की लड़की वासवदत्ता से अपने राजा की शादी कर दी। इस विवाह से उसने उन दोनों वंशों की पुरानी शत्रुता समाप्त कर दी। इसके बाद यौगन्ध ने दिग्विजय शुरु करवा दी। मगध से कुछ सेना आई और उसने लावणक में पड़ाव डाला।

एक दिन, अङ्गारवती अपने घर में खड़ी थी कि सामने से एक सिपाही गया। उसकी उम्र पच्चीस वर्ष से कम होगी। बहुत खूबसूरत था। परन्तु उसके चेहरे पर अङ्गारवती को दुख दिखाई दिया। पहली पहली बार अङ्गारवती ने उस सिपाही से प्रेम किया। उसने भी उससे प्रेम किया। इसलिये उसे देखकर ही तसल्ली करने के लिए वह रोज बुद्धदत्त के घर के सामने से गुजरता।

एक बार अङ्गारवती जब घर के दरवाजे पर खड़ी थी, तो उस सैनिक ने उस तरफ



से जाते हुये बात छेड़ी। उसने भी उससे बात की। उसका नाम शतानीक था। वह उज्जयनी नगर का था। सिवाय बूढ़ी माँ के उसका कोई न था। वह मगध राजा की नौकरी करता और अपनी माँ की सेवा शुश्रूषा भी। मगध के राजा की आज्ञा पर उसको, उसके दामाद उदयन के दिग्विजय के प्रारम्भ करने पर सैनिक होकर आना पड़ा, और अपनी माँ से भी दूर होना पड़ा।

"इस जङ्गल में रह रहा हूँ। जाने माँ की क्या हालत है, इसी फिक्र में दिन रात घुला जा रहा हूँ। न मालूम उदयन महाराजा के लिए कहाँ कहाँ जाकर युद्ध करना होगा। इन युद्धों में से मैं जीते-जी निकलूँगा कि नहीं। अगर जिन्दा रहा भी, तो घर वापस जाने तक माँ जीवित रहेगी कि नहीं। सब कुछ गड़बड़ा गया है। कभी कभी आत्महत्या करने की इच्छा होती है। जब से तुम्हें देखा है, तब से मेरी फिक्र बहुत कुछ कम हो गई है। अन्धेरे में तुम मेरे लिए रोशनी की तरह हो।" शतानीक ने कहा।

उसकी कहानी सुनकर अङ्गारवती का प्रेम उसके लिए दुगना हो गया। उसका





करूँगा। क्या तुम मेरे साथ चली आओगी? हम दोनों विवाह कर लेंगे। मेरी माँ तुम्हें बहुत अच्छी तरह देखेगी, हम दोनों को खुश देखकर वह सौ साल जियेगी।"

अङ्गारवती ने मन ही मन बहुत देर तक सोचा, आखिर वह उसके साथ जाने के लिए मान गई।

"आज आधी रात को इस रास्ते के बढ़ के पेड़ के पास आकर रहो। मैं आकर तुमसे मिलूँगा। फिर हम दोनों मिलकर चले जायेंगे।"

तब तक विश्वास पक्का हो गया था कि चण्डसेन ने उससे विवाह करने का निश्चय छोड़ दिया था। अगर शतानीक उससे शादी करना चाहता तो उसको कोई आपत्ति न थी। परन्तु यदि उसने उस मामूली सिपाही से शादी करनी चाहीं, तो उसके पिता बिल्कुल न मानेंगे।

एक दिन शतानीक हड़बड़ाता हुआ अङ्गारवती के पास आया। उससे कहा-"अङ्गारवती! मैंने एक निश्चय किया है, आज रात को बिना किसी को कहे मगध जा रहा हूँ। मैं सैनिक की नौकरी नहीं चाहता, जीना ही हो तो लकड़ियाँ काटकर जिन्दगी बसर

उस दिन रात को पिता के सो जाने के बाद, साडियाँ और कुछ चीजें लेकर गट्ठर बनाकर वह शतानीक के बताये हुए बढ़ के पेड़ के पास गई। उस पेड़ में एक बड़ा सा खोल था। वह उसमें छुप गई।

इसके थोड़ी देर बाद दो व्यक्ति बातें करते हुए उस तरफ आये। उनके पास आने पर अङ्गारवती पहचान गई कि उनमें से एक चण्डसेन था।

चण्डसेन अपने साथवाले से कह रहा था-"यह रास्ता आगे जाकर फटता है।

दायें तरफ जाने पर बुद्धदत्त का घर आयेगा। अगर बाई तरफ गये तो वहाँ एक उजड़ा मन्दिर हैं, सवेरे तक वहीं रहेंगे, फिर बुद्धदत के घर जायेंगे। इतने दिन मैंने उनके पास खबर भी न भेजी, न मालूम ये मेरे बारे में क्या क्या सोच रहे होंगे।"

अङ्गारवती ने उनकी बात सुनी। उसने यह भी देखा कि वे दोनों मन्दिर की ओर जा रहे थे। इसके थोड़ी देर बाद शतानीक आया, उसने धीमे से पुकारा- "अङ्गारवती।"

उसने खोल में से बाहर आकर कहा-"मैं तुम्हारे साथ नहीं आ सकती। मुझे माफ करो। यह कहने के लिए ही मैं यहाँ आई थी। मुझे क्षमा करो।"

शतानीक को उस पर गुस्सा न आया। उसने उससे कुछ पूछतलब भी न की। केवल इतना पूछा-"क्या मेरे साथ आकर मुझ से शादी करना तुम्हारे लिए असम्भव है?"

"सचमुच असम्भव है। अगर सम्भव होता तो क्या मैं साथ आना छोड़ती?" अङ्गारवती ने कहा।



शतानीक निश्वास छोड़ता अपने रास्ते चला गया, और अङ्गारवती अपने घर वापस चली गई। अगले दिन चण्डसेन ने उनके घर आकर कहा कि तभी राजा ने उसको जागीर दी थी, और उससे पहले वह पत्नी का भरण-पोषण भी न कर सकता था। वह अङ्गारवती से विवाह करके उसको कौशाम्बी नगर ले गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा- "राजा! अङ्गारवती ने शतानीक से क्यों नहीं शादी की? क्या इसलिए कि उसको उस पर प्रेम न था? या इसलिए कि चण्डसेन से शादी करने से उसे और श्री-सम्पदा, प्रतिष्ठा मिलेगी? इन प्रश्नों का उत्तर अगर तुमने जान बूझकर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

विक्रमार्क ने कहा-"अङ्गारवती में स्वार्थ न था। अगर होता तो वह एक गरीब सिपाही से शादी करने को तैयार न होती। निस्वार्थी प्रेम के लिए अपना धर्म नहीं छोड़ सकते। अङ्गारवती की भी यही बात हुई। उसने शतानीक से प्रेम किया, पर उस प्रेम का उससे ही सम्बन्ध था। अङ्गारवती का कर्तव्य चण्डसेन से विवाह करने का था। इस धर्म का सम्बन्ध उससे ही नहीं, उसके पिता से और उसके घराने से भी था। जब यह समस्या उठी कि उसे प्रेम छोड़ना चाहिये था, या धर्म, उसने झट प्रेम का त्याग कर दिया। धर्म का पालन किया। कहने का मतलब यह कि उसने चण्डसेन से मान-प्रतिष्ठा, श्री सम्पदा के लिए विवाह न किया था।

राजा का इस प्रकार मौन भङ्ग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया, और पेड़ पर जा बैठा।

(कल्पित)





पूर्व चीन में एक सूत का व्यापारी रहा करता था। वह बहुत धनी था। उसकी उम्र साठ की थी। पत्नी मर चुकी थी। बाल बच्चे न थे। क्या फायदा है, मेरे धन का जब कि उसका अनुभव करने के लिए बच्चे न हो?" हमेशा वह सोचा करता।

यह देख कि वह फिर शादी करना चाहता था, शादी तय करनेवाली स्त्रियों ने उसे आशा दिलवाई कि वे उसके लिए एक अच्छी लड़की ढूँढकर लायेंगे। बूढ़े ने कहा कि लड़की का सुन्दर होना आवश्यक था और यह भी जरूरी था कि वह बड़े घराने की मान मर्यादा से परिचित हो।

शादी तय करनेवाली स्त्रियों ने बूढ़े के लिए एक लड़की देखी। वह मन्त्री के घर में नौकरानी थी। क्योंकि वह छुटपन से ही एक बड़े घर में रह रही थी इसलिये बड़े घरानों के तौर तरीके जानती थी। बहुत सुन्दर थी। शादी तय करनेवाली स्त्रियों ने उससे कहा-"तेरा होनेवाला पति लखपति है। उसकी उम्र चालीस की है।" शादी के बाद पति के घर आने पर ही वह जान सकी कि उसका पति बूढ़ा था। उसे दुख हुआ। पर क्या करती?

एक दिन बूढ़ा व्यापार के काम पर किसी और जगह गया। उस दिन शाम को दासी ने अपनी मालकिन से कहा-"मालकिन! चलिये जरा हम टहल आयें, घर बैठे तो वक्त काटता-सा लगता है।"

बूढ़े की पत्नी मान गई। अच्छे कपड़े पहनकर दासी को लेकर घर से बाहर निकली। घर के पास ही बूढ़े की दुकान



थी। उसमें सूत, सिन्दूर वगैरह था। उस दुकान में दो मुनीम थे। उनमें से एक की उम्र पचास साल की थी। दूसरा छोटा था, और ब्रह्मचारी था। दोनों मुनीम अपनी मालकिन को देखकर खड़े हो गये। विनयपूर्वक उन्होंने सिर झुकाया। उसने उन दोनों से मुस्कराते हुये पूछा-"तुम कब से यहाँ काम कर रहे हो? तुम आराम से तो हो न ?" दोनों ने जवाब दिया कि उन्हें किसी चीज की कमी न थी।

घर के अन्दर जाकर कुछ धन लेकर उसने बड़े मुनीम और छोटे मुनीम के हाथ में दिया। फिर वह थोड़ी देर गली मैं खड़ी होकर, घर के अन्दर चली गई।

मालकिन ने दोनों मुनीमों को ईनाम देने में कुछ पक्षपात दिखाया। उसने बड़े मुनीम को दस चान्दी के सिक्के दिये और छोटे को दस सोने के सिके। इस पक्षपात को वे न ताड़ सके। परन्तु छोटा मुनीम, चाङ्ग, ईनाम पाकर बहुत खुश हुआ।

सूत की दुकान पर रात भर पहरा देना होता था। अगर एक दिन बड़ा मुनीम दुकान में सोता तो अगले दिन छोटा मुनीम। जब छोटा मुनीम एक दिन दुकान में सो रहा था, तो उसे किवाड़ का खटखटाना सुनाई दिया। जब चाङ्ग ने पूछा-"कौन है?" तो मालकिन की दासी ने कहा-"दरवाजा खोलो।" चाङ्ग ने किवाड़ खोलकर पूछा-"इस समय तुम्हें यहाँ क्या काम है?"

"मैं अपने काम पर नहीं आई हूँ। मुझे मालकिन ने भेजा है।" दासी ने कहा।

"क्या वे मुझे दी हुयी दस सोने के सिके वापस माँग रही हैं?" चाङ्ग ने पूछा।

"नहीं, नहीं, तुझे वे और बहुत कुछ दे रही हैं।" कहती हुई दासी ने पीठ पर से एक गठरी उतारी। उस गठरी में कुछ

नये कपड़े थे। "ये तेरे लिये और ये तेरी माँ के लिए हैं। हाँ, पर असली बात तो भूल ही गई।" कहकर उसने डेढ़-दो सेर भर चान्दी का गोला दिया।

इन उपहारों को देखकर चाङ्ग हैरान रह गया। वह उस दिन रात को सो न सका। सवेरे होते ही उसने दुकान खोली। बड़े मुनीम के आते ही उसे दुकान सौंपकर वह घर चला गया। कपड़े और चान्दी को देखकर चाङ्ग की माँ ने पूछा- "ये कहाँ से लाये?"

चाङ्ग ने सब बता दिया। "आखिर तुम्हारी मालकिन का क्या इरादा है? क्यों तुम्हें सोना चान्दी और कपड़े वगैरह दे रही है? तुम्हारे पिता के गुजर जाने के बाद तुम्हारे सिवाय मेरा और कोई नहीं है बेटा, अब तुम उस घर में न जाना।"

चाङ्ग ने कभी माँ की आज्ञा के विरुद्ध कुछ न किया था। उसने काम पर जाना छोड़ दिया। मालिक ने उसको काम पर न आता देख उस के लिए आदमी भेजा।

"मेरे लड़के की तबीयत खराब है। ठीक हो जाने पर आ जायेगा।"



चाङ्ग की माँ ने उस आदमी से कहा।

थोड़े दिनों बाद बड़े मुनीम ने आकर पूछा-"तुम्हारा लड़का कब काम पर आयेगा? अकेले काम देखते देखते मेरी जान आफत में है।" उससे चाङ्ग की माँ ने कहा- "मेरे लड़के की तबीयत और खराब हो गई है।"

उसके बाद और चार पाँच बार मालिक के आदमी आये। हर बार चाङ्ग की माँ कहती-"मेरा लड़का बीमार है।" फिर आदमियों का आना ही बन्द हो गया। चाङ्ग की माँ ने सोचा कि मालिक ने किसी और को रख लिया होगा।

एक महीना बीत गया। चाङ्ग के पास का पैसा खतम हो गया। वह मालकिन की दी हुई चान्दी वगैरह बेचने में हिचका। "माँ, कहा जाता है, खाली बैठकर खाते रहें, तो पहाड़ भी खतम हो जाते हैं। बिना काम धाम के कितने दिन गुजारा चलेगा?" चाङ्ग ने माँ से पूछा।

"बेटा, तुम्हारे पिता ने सूत और सिन्दूर बेचकर जीवन निर्वाह किया। तुम भी वही काम करो।" कहकर उसने दीवार पर लटके सूत के टोकरे को दिखाया।

जल्दी ही प्रकाश का त्यौहार आया। चाङ्ग ने अपनी माँ से कहा-"माँ, मैं रोशनी देखकर आऊँगा। राजमहल के पास बड़े बड़े दीये जलाये गये हैं।"

"बेटा, सम्भलकर, पर अपने मालिक के घर की ओर से न जाना। कुछ भी हो सकता है। अगर जाना भी पड़े तो अकेले मत जाना।" माँ ने कहा।

चाङ्ग अपने एक मित्र को लेकर दीये देखने राजभवन की ओर गया। ठीक जब वे वहाँ पहुँचे तो वहाँ भीड़ जमा हो गई थी और शोर-शराबा हो रहा था।



क्यों कि तभी लोगों को भेंट, पेय वगैरह दिये जाने लगे थे।

"इस भीड़ को चीरकर अब आगे नहीं जा सकते। मन्त्री के घर भी अच्छे अच्छे दीये रखे जाते हैं। चलो, वहाँ चलें।" वे यह सोचकर मन्त्री के घर की ओर चले, पर वहाँ भी बहुत भीड़ थी। उस भीड़ में चाङ्ग का दोस्त कहीं चला गया।

चाङ्ग को अपने पुराने मालिक का घर याद आया। प्रकाश के त्यौहार पर बूढ़ा तरह तरह के पटाके जलाया करता था। देखने में भी मजा आता था।

इसलिये चाङ्ग अपने पुराने मालिक के घर की ओर गया। पर वहाँ दीये न थे। घर में कोई न था। घर बन्द था। द्वार पर एक सूचना चिपकी हुई थी। चाङ्ग ने पास जाकर सूचना पढ़ी। उसमें लिखा था कि घर जब्त कर लिया गया था और घर के मालिक को कैद कर लिया गया था। चाङ्ग अभी सूचना पढ़ ही रहा था कि एक सिपाही ने आकर पूछा-"कौन हो तुम? क्यों तुम यहाँ आये हो?" चाङ्ग डर गया। वह जोर से भागने लगा। वह एक गली में जा रहा था कि





एक आदमी ने पीछे से पुकारा और कहा-"तुम्हें कोई बुला रहा है।"

चाङ्ग ने पहचान लिया कि वह एक ढाबे का नौकर था। चाङ्ग ने सोचा कि उसका मित्र शायद वहीं पहुँचा होगा, और उसे खाने के लिए बुला रहा होगा। वह उस नौकर के साथ चला। वह उसको पुरानी मालकिन के पास ले गया।

"आप! यहाँ क्यों हैं?" चाङ्ग ने उससे पूछा।

मेरे पति को जाली सिक्के बनाने के कारण पकड़ लिया गया है। सम्पत्ति जब्त कर ली गई है। मेरा अब कोई नहीं है। क्या तुम मुझे अपने घर में रहने दोगे?" उसने चाङ्ग से पूछा।

"यह तो नहीं हो सकता। मेरी माँ नहीं रहने देगी। फिजूल की बदनामी होगी। जाने क्या क्या सन्देह किये जायेंगे।" चाङ्ग ने कहा।

"चाङ्ग, क्या तुम सोच रहे हो कि अगर एक बार आ गई तो तुम्हारा पिण्ड नहीं छोड़ूँगी? इस मोती के हार को देखो।" कहकर उसने अच्छी मोतियों का एक सुन्दर हार दिखाया। उसमें एक सौ आठ सुन्दर मोतियाँ थीं। उनको देखकर चाङ्ग चकित हो गया।

"तुमने मुझे अपने घर में रहने दिया, तो तुम्हारी कोई हानि न होगी। एक एक मोती को बेचकर, हम सब गुजारा कर सकते हैं। तुम पर में भार नहीं होऊँगी।" पुरानी मालकिन ने कहा।

"अगर तुमको मेरे घर आना है, तो जरूरी है कि मेरी माँ माने। माँ से पूछकर बताऊँगा।" चाङ्ग ने कहा।

वह चाङ्ग के साथ उसके घर तक गई और बाहर खड़ी हो गई। चाङ्ग ने

अन्दर जाकर माँ से अपनी पुरानी मालकिन की बुरी हालत के बारे में बताया।

"अरे! ऐसी बात है! विचारी अब वे कहाँ हैं?" माँ ने पूछा।

"बाहर हैं।" चाङ्ग ने कहा।

"अन्दर आने के लिए कहो।" माँ ने कहा।

पुरानी मालकिन ने अन्दर आकर कहा-" मेरा कोई सहारा नहीं है। इसलिए ही आपका आसरा चाहती हूँ।"

"थोड़े दिन रह जाओ। और तो कुछ नहीं, हम लोग गरीब हैं। यह घर तुम जैसों के लिए न काफी है, न अच्छा ही। यही मेरा डर है। अगर तुम्हारा कोई रिश्तेदार हो, तो बाद को उनके यहाँ चले जाना।" चाङ्ग की माँ ने कहा।

पुरानी मालकिन ने मोतियों का हार दिखाकर कहा-"तुम इन मोतियों को बेच करके अपने सूत का व्यापार चला सकते हो।"

फिर चाङ्ग सूत का व्यापार करने लगा। जो पहले उसके मालिक के यहाँ सूत खरीदा करते थे, वे अब उसके यहाँ खरीदने लगे। उसका



व्यापार चल पड़ा। इस समय में पुरानी मालकिन ने उसको आकर्षित करने के लिए कई तरह से कई बार प्रयत्न किया। परन्तु चाङ्ग उसको अपनी माँ की तरह देखना रहा। इतने में बसन्तोत्सव आया। वह उस दिन का जलसा देखकर घर वापस आ रहा था कि उसको पुराना मालिक दिखाई दिया। उसकी हालत देख कर चाङ्ग का दिल पिघल गया।

"बाबू! क्यों आपकी इतनी बुरी हालत हो गई है?" चाङ्ग ने बूढ़े से पूछा।

"उससे शादी करके मैंने बहुत बड़ी गलती की। जानते हो उसने क्या किया?

मन्त्री के घर से एक मोती का हार उठा लाई। एक दिन मन्त्री के आदमियों ने आकर सारे घर की तलाशी ली और पूछा कि मोतियों का हार कहाँ था। मैंने कहा कि मुझे नहीं मालूम था। उन्होंने मुझे खूब पीटा, फिर जेल में डाल दिया। सौभाग्य से मेरी पत्नी ने आत्महत्या कर ली। इससे यह तो साबित हो गया कि वह दोषी थी, पर मोतियों का हार दिखाई नहीं दिया।" पुराने मालिक ने कहा।

चाङ्ग को ये बातें उल्टी सीधी-सी लगीं। वह मोतियों का हार, और वह स्त्री जब मेरे घर में है, तो ये कैसे कहते हैं कि उन्होंने आत्महत्या कर ली है। चाङ्ग अपने पुराने मालिक को साथ घर ले गया। उसने दासी से कहा-"छोटी मालकिन से एक बार बाहर आने के लिए कहो।"

दासी अन्दर गई। घबराती हुई बाहर आई और कहा-"अभी तक तो यहीं थी, मालूम नहीं इतने में कहाँ चली गई हैं।"

चाङ्ग का ख़याल पक्का हो गया कि उसके पुराने मालिक ने ठीक ही कहा था। अब तक जो उसके घर में थी, वह उसकी स्त्री का भूत ही था। उसके पास जो कुछ मोती बाकी रह गये थे, उन्हें उसने अपने मालिक को दे दिये। जो दो चार उसने बेचे भी थे, उन्हें फिर खरीदकर उसने उसको दे दिये। बूढ़े ने जाकर उनको मन्त्री को सौंप दिये। जब्त की हुई उसकी सम्पत्ति उसको वापस कर दी गई। क्योंकि चाङ्ग ईमानदार था, अच्छी नीयत का था, इसलिए ही वह पुरानी मालकिन के चुङ्गल में नहीं पड़ा, इसीलिए ही उसने अपने मालिक को मोती वापस कर दिये थे। उसकी नेकी के बारे में लोग सालों प्रशंसा करते रहे।





जब जुये में हारकर पाण्डव जङ्गलों में रह रहे थे, तब कुरुजाङ्गल देश के, यूप ग्राम के केशवदास नाम का ग्राह्मण अपनी पत्नी और तीन लड़कों को लेकर उद्यमक ग्राम के लिए निकला।

केशवदास का परिवार जब जङ्गल में उस जगह के पास पहुँचा, जहाँ पाण्डव आश्रम बनाकर रह रहे थे, तो उन्हें एक भयङ्कर व्यक्ति दिखाई दिया। उसके बिखरे बाल, कुछ हरी हरी, बड़ी बड़ी आँखें, काला रङ्ग, बाहर निकले दान्त, विशाल, बलवान छाती देखकर पाँचों घबरा गये।

यह व्यक्ति घटोत्कच था- हिडम्बी से भीम का लड़का। वह अपनी माँ के भोजन के लिए किसी नवयुवक की तलाश में निकला था। सौभाग्य से उसको ब्राह्मण पति पत्नी और उसके तीन लड़के दिखाई दिये। भय से उन्हें मागता देख घटोत्कच ने कहा- "ब्राह्मणो! ठहरो, ठहरो! गरुन्मन्त को देखकर जिस प्रकार साँप भागते हैं, उस प्रकार क्यों तुम भाग रहे हो?"

केशवदास जान गया कि वह कोई राक्षस था और जरूर उनका बुरा करके रहेगा। वह जानता था कि समीप ही पाण्डव एक आश्रम में रह रहे थे। पर उसने यह भी सुन रखा था कि केवल भीम को आश्रम की रखवाली करने के लिए छोड़ वे धौम्य के आश्रम किसी यज्ञ के लिए गये हुए थे। इस राक्षस से रक्षा करने के लिए भीम ही काफी था। पर क्या हमारे चिल्लाने पर भीम सुनेगा? इस घने जङ्गल में आखिर आवाज भी कितनी दूर जायेगी? इसलिए उस ब्राह्मण

ने जैसे भी हो, घटोत्कच को मनाना चाहा। और कोई रास्ता न था। उसने उससे कहा-"बेटा! क्यों हमें तङ्ग करते हो? हमें जाने दो।"

"आप जा सकते हैं। परन्तु आप अपने लड़कों में से एक को पहले मुझे दीजिये। मेरी माँ आज नर माँस खाना चाहती है। उसने मुझे आहार योग्य मनुष्य को लाने की आज्ञा दी है।" घटोत्कच ने कहा।

"अरे, अधम राक्षस! में ब्राह्मण हूँ। वेदों में पारङ्गत हूँ। अगर मेरे लड़के पर ही नरभक्षकों ने दान्त लगाये, तो क्या मैं स्वर्ग का अधिकारी हो सकूँगा?" केशवदास ने कहा।

"अगर आपने एक लड़के को देने में आपत्ति की, तो मैं आप पाँचों को एक क्षण में मार सकता हूँ।" घटोत्कच ने कहा।

ब्राह्मण ने पत्नी से कहा-"मेरा जीवन करीब करीब खतम हो ही गया है। क्या मैं अपने को राक्षस को सौंप दूँ ताकि औरों की रक्षा हो सके?"

"नहीं, नहीं! पत्नी का पति के लिए बलिदान हो जाना ही कर्तव्य है।



मेरी भी उम्र खतम हो गई है। मुझे राक्षसों के हाथ पड़ने दीजिये।" पत्नी ने कहा।

"मेरी माँ को बूढ़े बुढ़िया नहीं चाहिये।" घटोत्कच ने कहा।

फिर केशवदास के लड़कों में से हरेक ने अपने को देना चाहा।

"बेटा, तुम सयाने हो गये हो। मैं नहीं चाहता कि तुम बलि हो जाओ।" केशवदास ने बड़े लड़के से कहा। उसकी पत्नी ने सब से छोटे लड़के को देने से इनकार कर दिया।

तब ब्राह्मण के लड़कों में से मञ्झले ने कहा-"शायद मुझे कोई नहीं चाहता।"

"मैं चाहता हूँ, जल्दी मेरे साथ आओ।" घटोत्कच ने मञ्झले से कहा।

उस लड़के ने माता पिता से विदा लेकर, भाइयों से विदा लेकर घटोत्कच से कहा-"प्यास लग रही है। अभी थोड़ा पानी पीकर आता हूँ, ठहरो!" वह तालाब की ओर गया।

जब यह काफी देर तक न आया, घटोत्कच ने केशवदास से कहा-"तुम्हारा लड़का तो आता दिखाई नहीं देता, उसे पुकारता हूँ। क्या जरा उसका नाम बता सकेंगे?" ब्राह्मण ने बताने से इनकार कर दिया। जब बड़े लड़के से पूछा, तो उसने कहा-"हम उसे मध्यम नाम से पुकारते हैं।"

घटोत्कच जोर से चिल्लाया। उसके चिल्लाने से सारा जङ्गल गूँज उठा- "मध्यम! तुरन्त चले आओ।" यह आवाज भीम को सुनाई पड़ी। क्योंकि वह भी कुन्ती के पुत्रों में मध्यम था, इसलिए उसे लगा जैसे उसे कोई पुकार रहा हो। वह



चला आया। उसे घटोत्कच को देखकर खुशी हुई। वह घटोत्कच, जिसने केशवदास में भय पैदा किया था, वह भीम को किशोर शेर की तरह लगा। घटोत्कच को अभी चिल्लाता-"मध्यम! आओ!" देख भीम ने कहा-"आ तो गया हूँ।"

"क्या तुम भी मध्यम हो?" घटोत्कच ने पूछा। भीम ने कहा कि अपनी माँ की सन्तान में मैं भी मध्यम हूँ। ब्राह्मण ने अपनी पत्नी और लड़कों से धीमे से कहा-"यह हो न हो, भीम ही है।"

उसी समय दूसरा लड़का, प्यास बुझाकर आया। घटोत्कच से उसने कहा-"आ गया हूँ। चलो, चलें।"

केशवदास ने भीम से अपना वृत्तान्त सुनाकर कहा-"यह राक्षस मेरे लड़के को अपने भोजन के लिए ले जा रहा है, हमारी रक्षा करो।"

भीम ने घटोत्कच को रुकने के लिए कहा-"तुम ब्राह्मण परिवार को क्यों तङ्ग कर रहे हो? इस लड़के को तुरन्त छोड़ दो।"

"मैं अपनी माँ के आज्ञानुसार इसे पकड़कर ले जा रहा हूँ। मेरे पिता भी





अगर कहेंगे तो मैं इसे नहीं छोड़ूँगा।" घटोत्कच ने कहा।

"हम अपनी माँ की आज्ञा मानकर ही इस हालत में पहुँचे हैं।" मन ही मन सोचकर भीम ने पूछा-"कौन है तेरी माँ?" भीम ने पूछा।

"मेरी माँ हिडम्बी है। मेरे पिता भीम हैं।" घटोत्कच ने कहा।

"इसलिए ही इसमें मेरा शारीरिक बल है। परन्तु दीन अनाथों के प्रति जो मुझमें दया है, वह इसमें न आई।" सोचकर भीम ने कहा-"बस करो! इस लड़के को छोड़ दो।"

"मैं नहीं छोड़ूँगा।" घटोत्कच ने कहा।

भीम ने केशवदास से कहा-"आप अपने लड़के को ले लीजिये। अगर किसी को जाना ही पड़ा, तो इस राक्षस के साथ मैं जाऊँगा।"

घटोत्कच को गुस्सा आ गया। "इस ब्राह्मण के लड़के को में यहीं मारकर ले जाऊँगा। देखता हूँ, मुझे कौन रोकता है? है किसी में हिम्मत?"

"मैं ही रोकता हूँ।" भीम ने कहा।

"यही है, तो तुम मेरे साथ क्यों नहीं आते?" घटोत्कच ने भीम से कहा।

"अगर दम है तो मुझे जबर्दस्ती ले जाओ। जरा देखूँ तो तेरी ताकत। अगर तुम न ले जा सके, तब मैं साथ आऊँगा।" भीम ने कहा।

"जानते हो किससे बात कर रहे हो?" घटोत्कच ने पूछा।

"हाँ, तुम मेरे लड़के हो।" भीम ने कहा।

यह सुन घटोत्कच तमतमा उठा। भीम को उसको गुस्सा होता देख खुशी से गुदगुदी हुई।

"गुस्सा न कर। मुझ जैसे वीर के लिए तुम जैसे किशोर वीर को लड़का मानने में कोई आपत्ति नहीं है। माफ करो।" भीम ने कहा।

"पहले तो अपमान किया और अब डरकर माफी के लिए गिड़गिड़ा रहे हो?" घटोत्कच ने पूछा।

"डर! वह क्या चीज है, मैं नहीं जानता। तुम से सीखूँगा। जरा दिखाओ तो। मय क्या है यह जानने के बाद मुझे क्या करना है, निश्चित करूँगा।" भीम ने कहा।

"बताता हूँ, भय क्या चीज होती है। जो शस्त्र लेना चाहो उसे ले लो।" घटोत्कच ने कहा।

भीम ने दायाँ हाथ फैला कर कहा- "शत्रुओं का मर्दन करनेवाला यह हाथ ही मेरा शस्त्र है।"

"क्या तुम यह सोच रहे हो कि तुम भीम हो?" घटोत्कच ने परिहास करते हुये कहा।

"कौन है वह भीम? शिव है क्या? कृष्ण या इन्द्र या यम है?" भीम ने पूछा।

"सब मिलकर भी उसके बराबर न होंगे।" घटोत्कच ने कहा।



"यह झूठ है।" भीम ने कहा।

"मेरे पिता का अपमान करते हो?" कहकर घटोत्कच ने एक पेड़ उखाड़कर उस पर फेंका, भीम ने यों ही उसे एक तरफ हटा दिया। फिर घटोत्कच ने एक पहाड़ उठाकर भीम पर फेंका, उसे भी उसने दूर हटा दिया।

फिर दोनों ने कुश्ती की। उसमें जब घटोत्कच हार गया तो उसने भीम को माया से वश में करने का प्रयत्न किया। परन्तु उसने उसकी माया भी न चलने दी।

"याद है, तुमने वचन दिया था, कि अगर मैं तुमको जबर्दस्ती न ले जा सकूँ, तो मेरे साथ आओगे?" घटोत्कच ने लम्बा-सा मुँह करके पूछा।

"तो रास्ता दिखाओ।" भीम घटोत्कच के साथ हिडम्बी के रहने की जगह गया। भीम को बाहर खड़ा करके घटोत्कच माँ के

पास गया। "माँ, तेरे भोजन के लिए मनुष्य लाया हूँ।"

"कैसा मनुष्य है, बेटा?" हिडम्बी ने पूछा।

"बात तो आदमी की ही है, पर बल आदमी का नहीं है।" घटोत्कच ने कहा।

"देखें तो कौन है!" हिडम्बी ने आकर बाहर भीम को देखा। "बेटा, यह मनुष्य क्यों कर होंगे। बेटा, ये तो हमारे लिए भगवान हैं।"

"हिडम्बी, यह सब क्या है?" भीम ने हिडम्बी से पूछा।

"कुछ भी नहीं, एक बार मैने आपको देखना चाहा। लड़के को मैंने एक आदमी पकड़कर लाने के लिए कहा। मैं जानती थी कि उस लड़के की रक्षा के लिए आप जरूर आयेंगे।" हिडम्बी ने कहा।

भीम ने खुश होकर कहा-""मैं सोच रहा था कि तुम्हारी राक्षसी आदतें नहीं गई हैं।"

घटोत्कच ने पिता से क्षमा माँगी। "कल में कौरवों के लिए बन के लिए दावाग्नि-सा होऊँगा।" उसने वचन किया। केशवदास, भीम को धन्यवाद देकर अपनी पत्नी और पुत्रों के साथ चला गया। भीम, अपनी पत्नी हिडम्बी का आतिथ्य स्वीकार करने के लिए ठहर गया।





अल्पस पर्वतों पर रहनेवाले बौनों के बारे में बहुत सी कहानियाँ अब भी कही सुनी जाती हैं। यह समझा जाता है कि ये बौने कभी पहाड़ों की गुफा में, घने जङ्गलों में रहा करते थे, और फिर वे वह प्रदेश छोड़कर कहीं चले गये।

इन बौनों का कद दो फीट होता था उनमें कुछ विषेश शक्तियाँ भी होती थीं। वे दयालु होते थे। साधारण मनुष्यों की वे तरह तरह से सहायता किया करते थे। अगर मनुष्य कभी उनकी मदद करते तो वे कभी न भूलते। वे पशुओं को चराया करते। वैद्यक में वे बहुत प्रवीण थे। उनको खाने पीने की खास जरूरत न थी।

वे मनुष्यों के बच्चों को कोयला लाकर भेंट किया करते।

अगले दिन जब बच्चे उन कोयलों को देखते तो वे सोने में बदले हुए होते। कहा जाता है कुछ बौने पहाड़ों में हीरे भी खोजा करते।

एक बौना गरमियों में पहाड़ पर हीरे खोजने आया। वह साथ सात थैले लाया था। जल्दी जल्दी पत्थरों में कूदता वह हीरे या कीमती पत्थर चुनता, थैले भर लेता और बिना किसी को कुछ कहे चला जाता, फिर दो चार दिन बाद खाली थैले लेकर आता।

उन पर्वतों पर रहनेवाले गड़रिये उसे देखकर खुश होते। वह रात को गड़रियों के बीच बैठकर अपने नगर के बारे में अनोखी कहानियाँ सुनाया करता।

एक दिन गड़रियों को बौने को तङ्ग करने की सूझी। उन्होंने उसका एक भरा भराया

थैला लेकर छुपा दिया। बौना अन्धेरा होते ही वापस आया। उसने एक थैले को न पाकर पूछा-"मेरी रत्नों की थैली देते हो, या मुझे ही लेने के लिए कहते हो?"

"अगर ले सको तो ले लो।" गड़रिये ने कहा।

बौना झट पहाड़ पर गया और थैला जहाँ छुपाया गया था, वहाँ से ले आया। उसके बाद उसकी वस्तुओं को किसी ने नहीं छुआ।

जब पहाड़ों पर बर्फ गिरने लगी तो बौने ने जाते हुए गड़रिये से कहा-"मैं अपने नगर जा रहा हूँ। अगर तुम में से कोई वहाँ आना चाहे तो उसको थैले भर चान्दी ईनाम में दूँगा।"

सिवाय एक के किसी ने उसके निमन्त्रण पर ध्यान न दिया। उसने चान्दी लाने की सोची। वह बौनों के नगर की ओर चल दिया। वह पहाड़, नदी, पार करके बौनों के नगर में गया। नगर के बुर्ज सङ्गमरमर के बने थे। उस नगर में प्रवेश करने के बाद उसे लगा-"मैं यहाँ क्यों चला आया?" क्योंकि वह



उस बौने का नाम भी न जानता था। उस महानगर में उस व्यक्ति को कैसे पहचाने? किसके पास जाये?

वह खोया खोया-सा इसी फिक्र में गली गली घूम रहा था कि किसी ने पीछे से कन्धा थपथपाया। अच्छे कपड़े पहने हुए एक बौने ने पूछा-"क्या गड़रिये सब खुश हैं?" गड़रिया जान गया कि वह बौना ही उसके प्रदेश में गरीब बनकर आया था। उसे बड़ा आश्चर्य हुआ।

फिर वह बौना अपने अतिथि को घर ले गया, उसके घर की तुलना में राजमहल

भी कुछ न थे। गड़रिये ने बढ़िया खाना खाया। खाकर वह गद्देदार पलङ्ग पर सोया।

इस तरह के भोग विलासों का आनन्द लेता रहा, आराम किया। फिर थोड़े दिनों बाद वह उनसे ऊब-सा गया। उसे घर, पत्नी, बाल-बच्चे याद आने लगे। वह दुःखी रहने लगा।

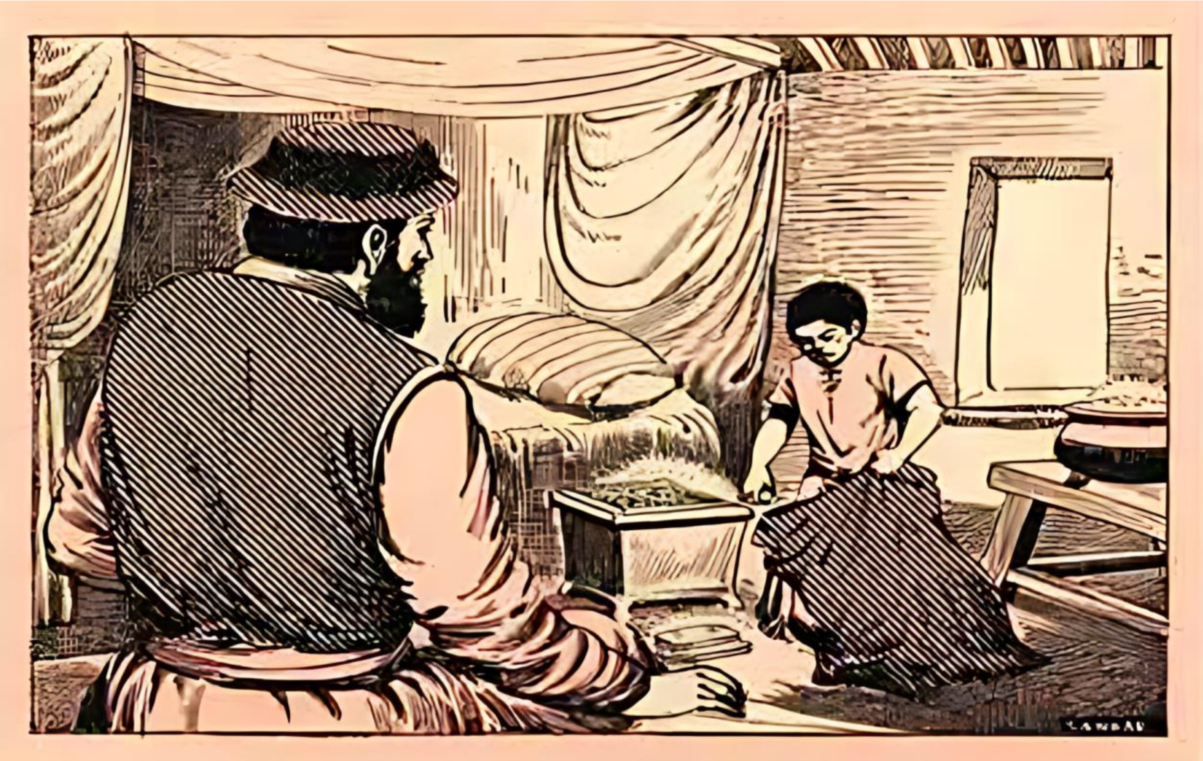
यह देख बौने ने पूछा-"क्यों यों दुःखी हो? क्या तुम यहाँ सुखी नहीं हो?"

"मुझे घर याद आ रहा है। मैं चला जाऊँगा।" गड़रिये ने कहा। बौने ने उसे थैले भर चान्दी देकर घर वापस भेज दिया।

*   *   *

एक घाटी में एक चक्की थी। उसका मालिक लालची था। उसकी पत्नी बहुत दिनों से बीमार थी।

एक साल उस घाटी में बारिश नहीं हुई। अकाल पड़ा। आस पास के पहाड़ों पर रहनेवाले एक बौने ने चक्की के मालिक के पास आकर थोड़ा सा आटा माँगा। चक्की के मालिक ने हो हल्ला करके बौने को भगा दिया।



चक्की के मालिक का एक लड़का था। उसे बौने को देखकर दया आ गई। उसने पिता की नजर बचाकर एक थैले में आटा भरकर बौने को दे दिया।

फिर एक दिन वह लड़का अपने पिता के पशुओं को चराने ले जा रहा था, तो रास्ते में उसे बौना दिखाई दिया। उसने उसे बौनों की दावत में बुलाया।

वह लड़का बौने के साथ चल दिया। बौने के घर का द्वार, एक पेड़ का खोल था। वे खोल में से उस गुफा में गये। चलते चलते वह गुफा बड़ी होती गई, आखिर वह एक बड़े मैदान में खतम हुई। उस मैदान में फलों के पेड़ ही पेड़ थे। वहाँ बौने खेल कूद रहे थे। भोग लगा रहे थे। नाच रहे थे। गा रहे थे। लड़के ने भी उनके साथ खेल कूदकर सहभोज किया।

फिर बौने एक एक करके अदृश्य हो गये, लड़का और उसको निमन्त्रित करनेवाला बौना बाकी रह गया।

"देखो भाई! यह फल अपनी माँ को तुरन्त खाने के लिए देना। यह फल अपने पिता को देना। मेरी याद में, यह मोतियों





का हार तुम रखना। तुम नहीं जानते हम कितनी दूर चले आये हैं। गुफा पार करके, कुछ देर विश्राम करके फिर घर जाना। समझे न?"

इस बीच, लड़के के माँ बाप, उसे न पाकर चिन्तित थे। उस दिन गोवें अपने आप घर वापस आ गई। दिन बीतते जा रहे थे; पर लड़का वापस न आया।

एक सप्ताह बाद वह लड़का घर आया, बौने के दिये हुए उपहार उसने दे दिये।

जब उसकी माँ ने वह फल थोड़ा-सा खाया तो उसकी बीमारी जाती रही। जब पिता ने फल को तोड़ा तो उसने देखा कि उसमें बड़े बड़े हीरे थे।

एक दिन एक बौने की स्त्री का जब प्रसव हुआ, तो एक किसान स्त्री उसकी मदद करने गई। प्रसव के बाद बौनों ने उस स्त्री को बहुत-सा कोयला कृतज्ञता-पूर्वक दिया।

वह किसान स्त्री मन ही मन बड़ी तिलमिलाई कि उन्होंने उसको उतना ऊँटपटाँग उपहार दिया था। परन्तु वह उनको गट्ठर बाँधकर घर ले गई। क्योंकि गट्ठर ठीक न बाँधा था, इसलिये कुछ कोयले रास्ते में गिर गिरा गये। वह तो सारे के सारे कोयले दूर फेंक देती। पर यह सोचकर कि कहीं बौने बुरा न मानें उसने वैसा न किया।

जब घर जाकर उसने कोयला फेंका तो क्या देखती है कि उनकी जगह सोने के सिक्के खनखना रहे हैं। उसे अपनी लापरवाही पर बड़ा पछतावा हुआ। यह कोयलों को ढूँढती फिर वापस रास्ते पर गई। पर कहीं भी उसको

कोयला न दिखाई दिया, न सोने के सिक्के ही, वह पछताई।

*   *   *

एक घाटी में नदी के किनारे, टीले पर एक घर में जुलाहा रहा करता था। वह कपड़े बुनकर जीवन निर्वाह किया करता था। वह होने को तो बहुत गरीब था। पर सुख से रहा करता था। बौने अक्सर उसके घर में मिला करते।

एक साल नदी में बाढ़ आई। जुलाहा को डर लगा कि कहीं उसका घर डूब न जाये, इसलिये उसने जो कुछ चीजें उसके पास थीं, उन्हें नदी के पार पहुँचा दीं।

जैसा उसको डर था, पानी उसके घर में भी चढ़ आया। इतने में जुलाहे को किसी का आर्तनाद सुनाई दिया। आवाज किसी बौने की मालूम होती थी। जब जुलाहे ने अपने घर की ओर देखा, तो उसकी छत पर उसको एक बौना दिखाई दिया।

जुलाहा साहस करके नदी पार कर के डूबते घर के पास गया। छत पर से बौने को उतारकर, वह इस पार



उसे ले आया। "तुमने मेरे प्राणों की रक्षा की है। मैं तुम्हारा ऋण न रखूँगा। यह लो, इस थैले में कच्चे चने इन्हें पकाकर तेरा सारा कुटुम्ब ला सकता है। पर थैली कभी खाली न करना हमेशा कम से कम थैली में दो तीन दाने रहने देना।" बौने ने जुलाहे को थैली दे दी।

जुलाहे को यह उपहार बिल्कुल नहीं जँचा। वह तो पहले ही इस फिक्र में था कि उसकी कौन कौन सी चीजें खो गई थीं। उस दिन वह अपने कुटुम्ब को लेकर किसी के घर रहा। सवेरे तक नदी में बाढ़ चली गई। सौभाग्यवश बाढ़ में उसका घर बह नहीं गया था। वह

अपने कुटुम्ब को लेकर घर वापस आ गया। घर साफ करके उन्होंने जब रसोई करनी चाही, तब वे चने बड़े काम आये। बौने के कहे के अनुसार उन्होंने थैले में दो दाने रहने दिये और बाकी पकाकर वे खा गये। जब अगले दिन उन्होंने थैली देखी, तो वह फिर भरी हुई थी। इस तरह जुलाहे के कुटुम्ब को स्वादिष्ट पौष्टिक खाना मिलता रहा। कपड़े बेचकर उन्हें जो कुछ मिलता वे उसको जमा करने लगे। क्यों कि खाने पीने की चीज़ों पर कुछ खर्च करने की जरूरत न थी।

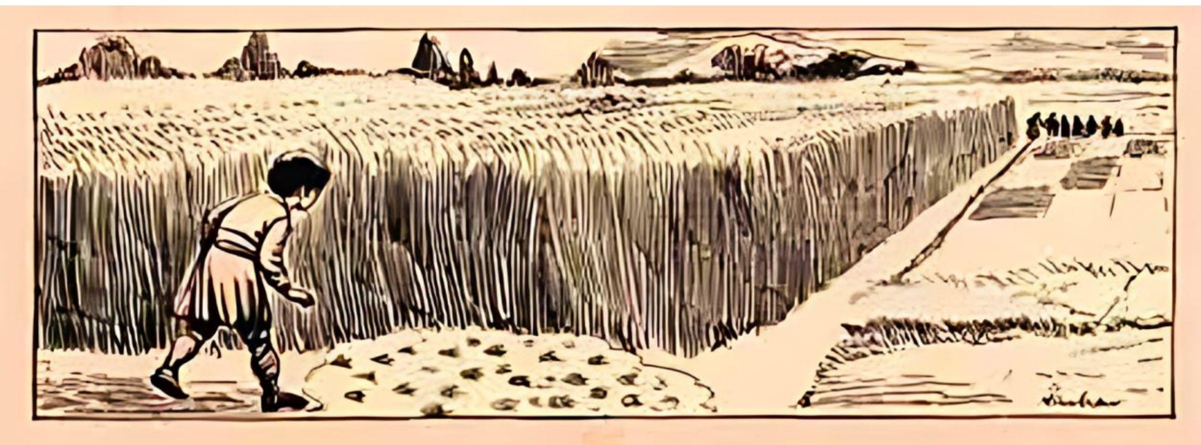
कहते हैं कि वह थैली उस परिवार में कई पीढ़ियों तक रही। एक बार एक नई रसोई करनेवाली ने अनजाने में उस थैली को खाली कर दिया। फिर उसके बाद वह थैली कभी नहीं भरी।

*   *   *

कहा जाता है, यदि बौने अल्प्स पर्वतों से चले गये तो इसका कारण, वहाँ के लोगों की उनके प्रति कृतघ्नता थी, उनका तिरस्कार था। इस तिरस्कार के उदाहरण में एक कहानी सुनाई जाती है।

एक बार एक नौजवान जब खेत में खाद डाल रहा था तो कुछ बौने उसकी मदद करने आये। क्योंकि बौनों के कपड़े जमीन छूते थे, इसलिये उनके पैर न दिखाई देते थे। परन्तु उस नौजवान ने सुन रखा था कि बौनों के पैर बत्तखों के पैरों से होते थे। वह ठीक था कि नहीं, यह जानने के लिए उसने चूना उस जगह डाल दिया।

बौने, हमेशा की तरह नौजवान से बातें करके उसकी मदद करके चले गये। चूने में उनके पद चिन्ह रह गये। वे बतखों की तरह ही थे। उसके बाद उस प्रदेश में कभी बौने नहीं दिखाई दिये।





इस बीच उज्जयनी का राजा जान गया कि जो दवा उसने पी थी, उसमें तेल था। वह तिलमिला उठा। उसने आज्ञा दी-"इस जीवक को पकड़कर फाँसी दे दो।" पर पता लगा कि जीवक भद्रवती पर सवार होकर फरार हो गया था। राजा ने अपने मुख्य कहार को, जिसका नाम ओप्पणिक था, बुलाकर कहा-"अगर तुम जीवक को पकड़कर लाये तो तुम्हें बहुत-सा ईनाम दूँगा।"

ओप्पणिक भागा भागा कोशाम्बी नगर गया। वहाँ उसने जीवक से मिलकर कहा-"महाराज ने आपको तुरत लिवा लाने के लिए कहा है।"

"मुझे भूख लग रही है। खाना खाकर चलूँगा। तुम भी मेरे साथ भोजन करो।" जीवक ने कहा। ओप्पणिक इसके लिए न माना। "खैर, कम से कम इस फल को तो खाओ।" कहते हुए जीवक ने उसको एक फल आधा काटकर दिया। उसको खाते ही ओप्पणिक के हाथ पैर गिर-से गये। बेकाम से हो गये।

जीवक ने भोजन किया। अपने हाथी को पानी पिलवाकर, ओप्पणिक के पास



आकर कहा-"मुझे राजा के पास ले जाओगे? क्यों नहीं चलते?"

"मुझे पहिले स्वस्थ कीजिये। फिर आप जहाँ बुलायेंगे, वहाँ आऊँगा।" ओप्पणिक ने कहा।

"अच्छा तो वह बचा आधा फल खाओ।" जीवक ने हँसते हुए कहा।

"आधा खाकर ही हाथ पैर ठण्डे हो गये थे। और खा लिया तो जिन्दा न बचूँगा।" ओप्पणिक ने कहा।

"मैंने कभी किसी के प्राण नहीं लिए हैं। मैंने कभी किसी के हाथ पैर बेकाम भी न किये। तुम स्वस्थ हो जाओगे। फल खा लो।" जीवक ने कहा। उसकी बात पर विश्वास करके ओप्पणिक ने फल खा लिया, और वह स्वस्थ हो गया।

"तुम उज्जयनी वापस चले जाओ। राजा की बीमारी अब तक ठीक हो गई होगी। इसलिए वह तुम्हें कुछ नहीं कहेगा।" ओप्पणिक से यह कहकर जीवक राजगृह की ओर चल पड़ा।

इन सब घटनाओं के बाद एक बार ऐसा मौका आया जब जीवक को बुद्ध की चिकित्सा करनी पड़ी।

एक दिन आनन्द ने जीवक के पास आकर कहा कि बुद्ध स्वस्थ न था। उससे उसने बुद्ध की चिकित्सा करने के लिए कहा। जीवक बुद्ध के बिहार में गया। उनकी परीक्षा करके उसने बताया कि उनकी बीमारी के तीन कारण थे। उसने तीन औषधियाँ बनाई। उसने उनको तीन सन्तरों में रखा, और कहा कि अगर उन सन्तरों की सुगन्ध सूँघी गई तो स्वास्थ्य ठीक हो जायेगा। बुद्ध ने वैसा ही किया, और उनका स्वास्थ्य ठीक हो गया।

चण्डप्रोद्योत जब ठीक हो गया, तो उसने जीवक को भेंट में दो अमूल्य दुशाले भेजे। उनमें से एक को जीवक ने बुद्ध को उपहार में दिया। बुद्ध ने आनन्द को बुलाकर कहा- "अगर हम भिक्षुओं को ऐसी अमूल्य भेंटे मिलने लगीं, तो चोरों का भय भी अधिक हो जायेगा।"

आनन्द ने जीवक के दिये हुए दुशाले के तीस टुकड़े किये। पाँच पाँच टुकड़ों को मिलाकर उसने कपड़े बनवाये। यह देख बुद्ध बहुत खुश हुए। उन्होंने कहा कि किसी भिक्षु के पास तीन बस्त्रों से अधिक नहीं होने चाहिये, और उनमें तीस जोड़ होने चाहिये। जीवक भी बुद्ध का उपदेश सुनकर उनके शिष्यों में शामिल हो गया। उसने बुद्ध को दिन में तीन बार देखना चाहा। परन्तु वेलवन विहार बहुत दूर था। इसलिए जीवक ने ही अपने बाग में एक बिहार बनाया। उसमें बुद्ध से रहने की प्रार्थना की। ये घटनायें बुद्ध के बुद्धत्व प्राप्त होने के बीस वर्ष बाद हुई।

कोशल देश के राजा के यहाँ भार्गव नाम का पुरोहित था। उसकी पत्नी



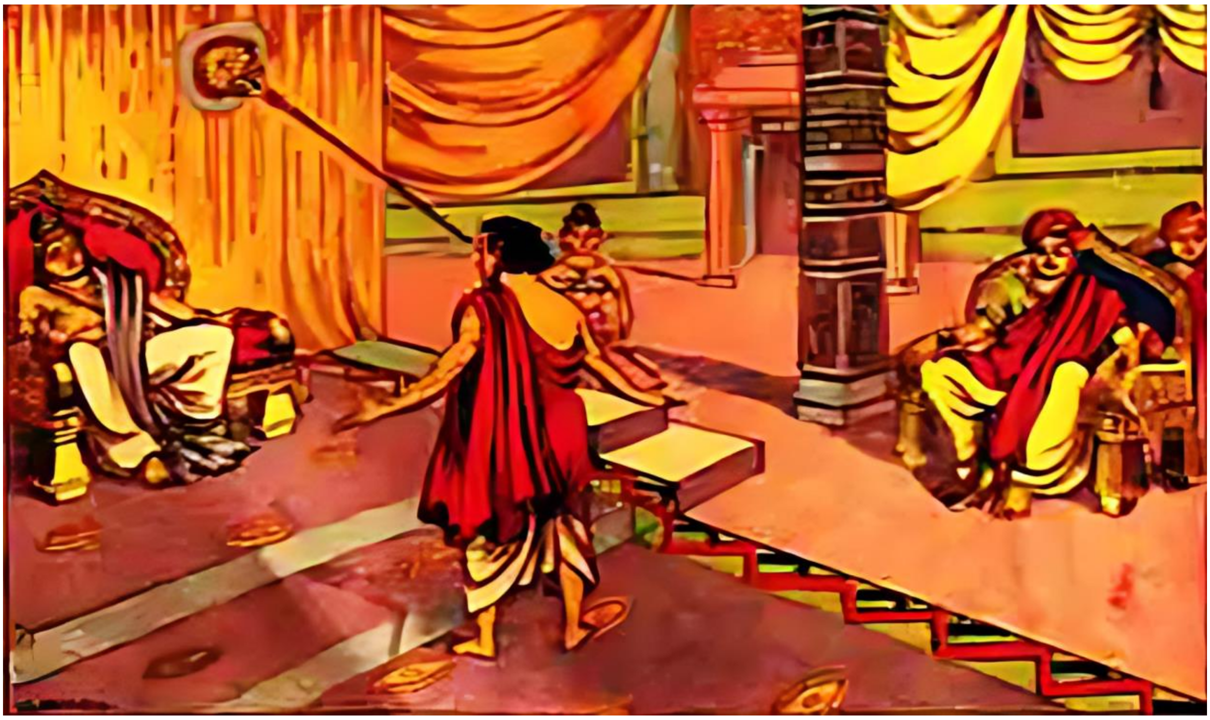
ने एक लड़के को जन्म दिया। उस समय सारे नगर में तलवार, कटारें चमचमाई। पुरोहित को यह देख आश्चर्य हुआ। उसने ज्योतिषी के पास जाकर इस बारे में बताया। ज्योतिषी ने लड़के की कुण्डली बनाकर कहा-"यह लड़का बड़ा डाकू निकलेगा।" अगले दिन सवेरे पुरोहित ने राजा के पास जाकर पूछा-"महाराज! क्या आप रात को आराम से सो सके?"

"नहीं, रात भर मेरी तलवार चमकती रही। मुझ पर या मेरे राज्य पर शायद कोई आपत्ति आनेवाली है।" राजा ने कहा।

परन्तु जीवक समझदारी में किसी से कम न था। उसने रानियों से कहा-"ये राजोचित मेरे लिये क्यों? मैं साधारण नागरिक हूँ। मुझे आराम से रहने दीजिये। यही मेरे लिये काफी है।" यह सुन महाराजा और रानियाँ बहुत सन्तुष्ट हुई। महाराजा ने उसके नाम बहुत से बाग, गाँव आदि लिख दिये ताकि उनकी आमदनी से वह सुख-पूर्वक जीवन निर्वाह कर सके।

राजगृह में एक कुलीन धनी को सिर दर्द हुआ। दो वैद्यों ने उसकी परीक्षा की। उन्होंने कहा कि उस रोग की कोई चिकित्सा न थी और उस रोग के कारण उसकी मृत्यु भी होनेवाली थी। उनमें से एक ने कहा कि एक सप्ताह में उसकी मौत दोगी, दूसरे ने कहा कि पाँच दिन में।

क्योंकि वह कुलीन राजगृह के लिए बहुत मुख्य था, इसलिए महाराजा बिम्बसार भी उसके रोग के बारे में चिन्तित था। उसने जीवक को बुलाकर उस कुलीन की चिकित्सा करने के लिए कहा। जीवक ने जाकर रोगी को देखा। "इस रोगी के सिर में दो कीड़े हैं, एक बड़ा और दूसरा

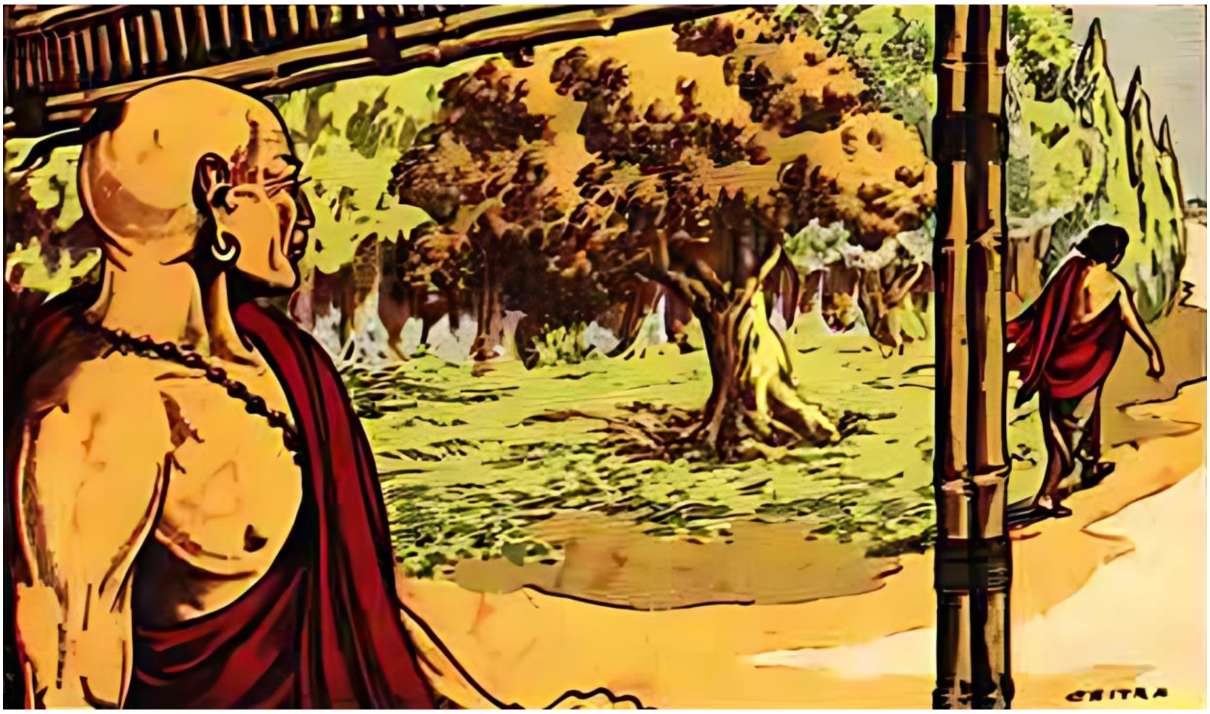


अहिंसक के साथ कैसा व्यवहार करती थी। वह अहिंसक को बड़े प्यार से देखती थी। वह शिष्यों के षड़यन्त्र के बारे में नहीं जानती थी।

आखिर गुरु को अहिंसक पर गुस्सा आया। उसने उसे मार देना चाहा। परन्तु यदि यह बात सब को मालूम हो गई तो उसके पास कोई पढ़ने न आयेगा, उसे यह भय था। इसलिये उसने अहिंसक को बुलाकर कहा- "अब में तुम्हें कुछ न सिखाऊँगा। अगर तुम पढ़ना चाहते हो, तो हज़ार आदमियों की हत्या करके उनके हाथ की एक एक अंगुली काटकर लाओ, ताकि मुझे विश्वास हो कि तुमने उन्हें मारा है। तभी मैं तुम्हें पढ़ाऊँगा।"

"गुरुजी! दूसरों की हानि करना हमारी वंश परम्परा नहीं है। परन्तु में पढ़ने के लिए बहुत उत्सुक हूँ। क्योंकि आप कह रहे हैं कि बिना हजार आदमियों को मारे आप मुझे नहीं पढ़ायेंगे इसलिये हजार अंगुलियाँ आपको समर्पित करके मैं पढूँगा।" यह कहकर अहिंसक जङ्गलों में चला गया।

जङ्गल में एक ऐसी जगह थी, जहाँ आठ रास्ते मिलते थे। वह वहाँ खड़ा





हो गया। जो उधर से जाता उसको मारता, और उसकी अंगुली रख लेता। इसलिये उसका नाम ही अंगुलीमाल हो गया।

इस तरह अनेक हत्याओं के होने के बाद, लोगों में तहलका मच गया। उन्होंने राजा के पास जाकर कहा- "महाप्रभु! जङ्गल में कोई डाकू आया हुआ है। वह जङ्गल में से जो गुजरता है, उसे मार रहा है। अगर आप अपनी सेना के साथ उसका नाश करने न गये, तो सारा देश निर्जन हो जायेगा।"

राजा ने उनकी प्रार्थना के अनुसार सेना भेजकर अंगुलीमाल को मारने का निश्चय किया। यह समाचार सारे शहर में फैल गया। पुरोहित को भी यह बात मालूम हुई। उसने अपनी पत्नी से कहा-"यह अंगुलीमाल हमारा लड़का ही होगा। उसे सैनिक मार देंगे। क्या किया जाय?"

"राजा के जाने से पहले आप जाकर उसको घर बुला लाइये।" पुरोहित की पत्नी ने कहा।

"मैं नहीं जाऊँगा। शास्त्रों में लिखा है, वृक्ष की शाखा, राजा और स्त्री पर विश्वास नहीं करना चाहिये।" पुरोहित ने कहा।

"तो मैं जाऊँगी।" कहकर पुरोहित की पत्नी निकल पड़ी।

इस बीच, अंगुलीमाल ने नौ सौ, निन्यानवें हत्यायें कर दी थीं और उसने उनकी अंगुलियाँ भी जमा कर ली थीं। अगर उसने एक और आदमी की हत्या कर दी, तो उसका ऋण पूरा हो जायेगा। जो कोई दीखेगा, उसे मार दूँगा; यह सोचकर, किसी के आने की वह जङ्गल में प्रतीक्षा करने लगा।

सच कहा जाये तो हजारवीं हत्या उसकी माँ की होनी चाहिये थी, परन्तु



जङ्गल में आने से पहले बुद्ध का उधर आना हुआ। रास्ते में कुछ गड़रियों ने बुद्ध से कहा-"स्वामी! आप उधर जा रहे हैं? उस रास्ते पर कोई अकेला जाने का साहस नहीं करता। वहाँ एक बड़ा डाकू है जो कोई अकेला मिलता है, वह उसे मार देता है।" परन्तु बुद्ध ने उनके कहने की परवाह न की। वे आगे चलते गये।

अंगुलीमाल ने दूरी पर एक सन्यासी को आता देख सोचा-"अगर मैंने इस आदमी को मार दिया, तो मेरा काम पूरा हो जायेगा।" वह खुश हुआ। उसे यह अच्छा मौका लगा। क्योंकि उसकी हत्याओं के कारण लोग सावधान होकर आने लगे थे, और उसके हाथ न आते थे।

बुद्ध जब पैदल जा रहे थे, तो उन्हें पकड़ने के लिये अंगुलीमाल उनके पीछे चला। वह बहुत तेज भागा, परन्तु बुद्ध को न पकड़ सका।

"मैंने भागकर, घोडों को, हाथियों को, रथों को पकड़ा है, पर इस सन्यासी को क्यों नहीं पकड़ पा रहा हूँ।" वह मन ही मन आश्चर्य करने लगा। फिर उसने पुकारा-"ऐ सन्यासी, ठहरो।"

बुद्ध ने ठहरकर कहा-"पर तुम मेरे पास न आओ।" फिर उन्होंने मृत पिशाच के बारे में बताया। उसे इस विषय में भी उपदेश दिया कि हत्यारों को क्या क्या कष्ट सहने पड़ते हैं।

बुद्ध की बातें सुनते ही अंगुलीमाल के मन में परिवर्तन होने लगा। उसको पूर्व जन्म के पुण्यों का मानों यकायक फल मिल गया। वह तुरत बुद्ध का शिष्य बन गया और उनके साथ चेतवन चला गया।

(अभी है)



CHANDAMAMA (Hindi) FEBRUARY 1960 Regd. No. M. 5452



बुद्ध चरित्र